ी है :

इसमें वर को कोई शर्त पूरी नहीं करनी थी। बस, लड़की की पसन्द ही सब कुछ थी। और लड़की की पसन्द बड़ी ऊंची थी; उसकी आंख की तराज़ू पर कोई पूरा नहीं उतरता था।...

मूल्य
एक रुपया

प्रकाशक	हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली शिक्षा भारती प्रेस, शाहदरा, दिल्ली

.R : SATYENDRA SHARAT : NOVEL

निवेदन

'स्वयंवर' एक ऍण्टरटेनर है। आप इसे लघु उपन्यास भी कह सकते हैं। कथावस्तु और कलेवर की दृष्टि से इसे लघु उपन्यास माना जा सकता है; किंतु वास्तव में है यह ऍण्टरटेनर ही। इसका उद्देश्य महज़ आप लोगों का मनोरंजन करना है।

ऍण्टरटेनर बहुत ही कम लिखे गए हैं। जितने प्रकाशित हुए हैं उनमें ग्राहम ग्रीन के 'फ़ॉलन आइडल' और 'द थर्ड मैन' काफी ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। सर कैरल रीड ने उनके सिने-रूपांतरों पर सफल फिल्में भी बनाई हैं। हिन्दी में मुझे श्री भगवतीचरण वर्मा के 'अपने खिलौने' का ही ध्यान आता है जोकि अपने ढंग का एक अनूठा और सफल ऍण्टरटेनर है।

इस छोटी-सी भूमिका के साथ मेरा यह तुच्छ प्रयास आपकी सेवा में प्रस्तुत है। मुझे विश्वास है कि इस ऍण्टरटेनर से आपका पर्याप्त मनोरंजन होगा।

सत्येन्द्र शरत्

विविध भारती
ट्रांस्क्रिप्शन सर्विस
आकाशवाणी,
नई दिल्ली
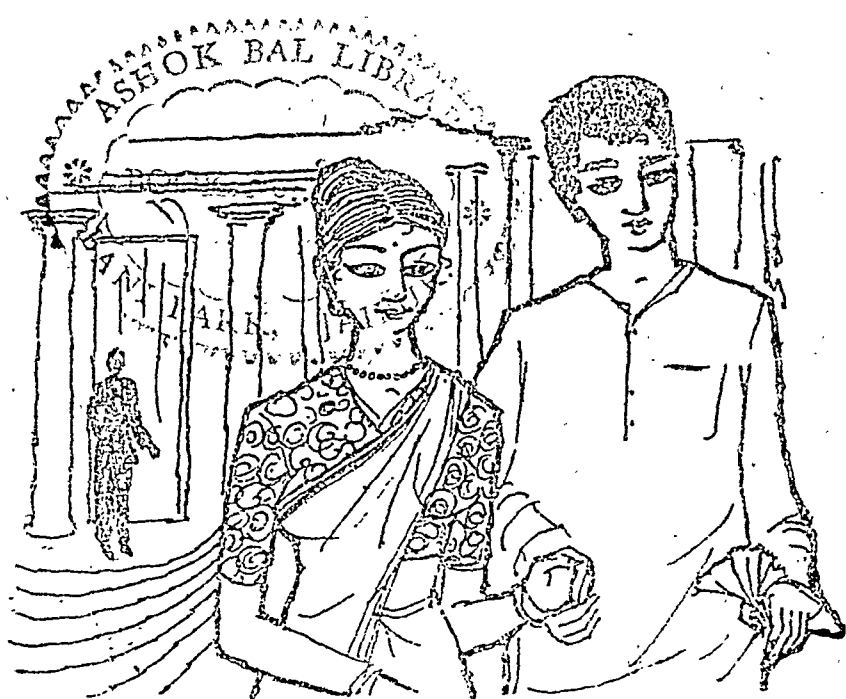
स्वयंवर

महत्त्वपूर्ण घटनाओं के अंकुर प्राय: बहुत छोटी चीज़ों में निहित रहते हैं।

जिस समय मिस जयंती को छोटा-सा निमंत्रण-पत्र मिला था, क्या उसे इस बात का रंच-मात्र भी आभास था कि वह निमंत्रण-पत्र, एक न एक दिन, उसके वर्षों से एक ही लीक पर चले आ रहे जीवन-क्रम में होनेवाले आमूल परिवर्तन का मुख्य कारण बन जाएगा !

अपनी प्रिय सहेली मुरली और उसके पति की ओर से आया हुआ वह निमंत्रण-पत्र इस प्रकार था :

"श्री और श्रीमती एम० एन० कुशवाहा, अपने विवाह की तीसरी वर्षगांठ पर आयोजित एक चाय-पार्टी में आपको अपने निवास-स्थान पर आमंत्रित करते हैं।"

नीचे वर्षगांठ की तारीख, पार्टी का समय, मेज़बान के जोरबाग-

वाले भवन का पता और टेलीफोन नम्बर आदि दिया हुआ था।

एक नई और अवांछित मुसीबत आ खड़ी हुई—जयंती ने मन ही मन सोचा, और अनमने भाव से निमंत्रण-पत्र को मेज़ पर योंही फेंकती हुई गहरी चिंता में डूब गई। कहीं आना-जाना और वहां शिष्टाचारवश लोगों से मिलना-जुलना अब उसे अच्छा नहीं लगता था। इस तरह की सामाजिक भीड़ में वह अपने को बहुत अकेला महसूस करती थी। वहां लोग उसे खोखली हंसी और बनावटी मुस्कराहटों के साथ बड़ी निकम्मी और फिज़ूल-सी बातें करते ए लगते थे। अक्सर इस तरह के आयोजनों में शामिल हो अपने समय की हत्या करते हुए उसे हमेशा यही अनुभूति होती थी कि उसके चारों ओर खड़े, बतियाते व्यक्तियों के पास ढेर सारा अवकाश है जिसके सही इस्तेमाल का इन्हें कोई उपाय नहीं सूझता। इसीलिए ये लोग बैठे-बिठाए पार्टियां देने के झूठे बहाने गढ़ते रहते हैं ताकि बीस-तीस व्यक्ति एक स्थान पर एकत्रित हो, जगह और समय का ख्याल किए बिना, चाय-कॉफी और खाद्य-पदार्थों के सहारे, इतमीनान से पराई चर्चा और जग-निंदा करते रहें। साथ ही पार्टी में बटोरी हुई अफ-वाहों और अखबारी मज़ाकों को हफ्ता-भर अपने परिचितों में सर्कु-लेट करते रहें......

अब जयंती ने स्थिति के दूसरे पहलू की ओर अपने विचार दौड़ाए—यदि वह पार्टी में न गई तो क्या होगा ? मुरली उसकी प्रिय सहेलियों में से एक थी, बी० ए० में उसकी सहपाठिनी थी और ज़रा-ज़रा-सी बात में रूठ जाने में एक्सपर्ट थी। शादी के तीन वर्ष बीत जाने और अपने शरीर व स्वभाव में लक्ष्य किए जा सकनेवाले बहुत सारे परिवर्तनों के बावजूद भी मुरली ने बात-बात पर रूठने और तुनककर मुंह फुलाने की आदत का परित्याग नहीं किया था, यह बात जयंती अच्छी तरह जानती थी। न आ सकने की ढेर सारी सफाइयां देने से कहीं अधिक अच्छा यही था कि एस्प्रीन की कुछ गोलियां साथ रख, अपने भावुक स्नेही जनों की पार्टियों में शामिल हो उन्हें अनुगृहीत किया ही जाए। इस बहाने वह मुरली को कुछ भेंट भी दे सकेगी। वरना किसीको कुछ देने-दिलाने—और फिर बदले

में कुछ पाने—का अवसर आज के प्राणी को मिलता ही कहां है! अपना या अपने बच्चों के जन्म-दिन, शादी-ब्याह या शादी-ब्याह की वर्षगांठ—ये ही तो गिने-चुने बहाने हैं, आज का सभ्य व्यक्ति उपहार देने के लिए जिनकी आड़ ढूंढ़ता है।

इसी तरह के विचार धीरे-धीरे जयंती के मस्तिष्क पर छाते रहे; और शायद इन्हीं विचारों से धीरे-धीरे प्रभावित होने के कारण निश्चित तिथि पर, निश्चित समय के एक घंटे बाद जयंती रंगीन कागज़ में लिपटे अपने उपहार के साथ मुरली के निवास-स्थान पर आ उपस्थित हुई। कॉल-बेल सुन, नौकर की तत्परता पर विश्वास न करती हुई मुरली स्वयं बाहर आई। जयंती को देख आश्चर्य, विस्मय और प्रसन्नता का नाट्य करती हुई तपाक से उससे गले मिली और इतनी देर से आने का उलाहना करती हुई उसका हाथ पकड़, खींचती-सी उसे अंदर ड्राइंग-कम-डाइनिंग-रूम में ले आई जहां चाय की समाप्ति के बाद एक छोटे-से गान-नृत्य उत्सव का शुभारम्भ हो चुका था।

मुरली और जयंती के अंदर आने पर, सुगम संगीत सुनते हुए उपस्थित समुदाय ने उस ओर दृष्टि डाली। पुरुष अपने सूट और टाइयां आदि दुरुस्त करने लगे और स्त्रियों ने यह भाव प्रदर्शित किया जैसे कुछ हुआ ही नहीं है। अपनी पत्नियों की उपस्थिति और उनकी दृष्टि का अहसास करते हुए विवाहित सज्जनों ने शीघ्र ही अपनी दृष्टि जयंती की ओर से हटाकर सुगम संगीत प्रस्तुत करती हुई कलाकार पर पुनः केन्द्रित कर ली। किंतु अविवाहितों पर तो कोई अंकुश था नहीं। चंद ढीठ विवाहितों के साथ उनकी दृष्टियां भी तब तक जयंती का पीछा करती रहीं, जब तक मुरली के संकेत करने पर वह आगे की एक खाली कुरसी पर न बैठ गई। पीछे की कुरसियों पर साथ बैठे तीन व्यक्तियों में से बीचवाले नवयुवक का चेहरा जयंती को देख इस तरह खिल उठा जैसे एक लम्बे और दीर्घ पतझड़ के बाद अचानक ही किसी उपवन में वसंत आ गया हो। उसके आस-पास बैठे साथियों ने अपने मित्र के काले चेहरे को आलोकित देखा तो मंद-मंद मुस्कराने लगे।

सिर झुकाए जयंती बैठी सुगम संगीत का आइटम सुनती र

शीघ्र ही वह गीत समाप्त हो गया। गायिका कुछ थकी-सी अपने स्थान से पीछे हटने लगी। कमरे में तालियों की गड़गड़ाहट फैल गई। चंद उन व्यक्तियों ने, जिन्होंने अपना मन मुट्ठी में ले रखा था, कुछ दबे और धीमे स्वर से एक और गीत का इसरार किया, लेकिन कहीं से अपना समर्थन न पा, खिसियाई दृष्टि से इधर-उधर देख, उन्होंने ज़ोर-ज़ोर से तालियां बजाना आरम्भ कर दिया।

मुरली का देवर 'मास्टर ऑफ सेरिमनीज़' था। इस कलात्मक कार्यक्रम का आयोजन उसीके बल-बूते पर हुआ था। गायिका महोदया के उस छोटे-से मंच से उतरते ही, वह मंच पर आ गया और आकाशवाणी तथा रेडियो सीलोन के मिले-जुले अंदाज़ में लच्छेदार शब्दों में गायिका के रूप और स्वर की प्रशंसा करता हुआ उन्हें गीत प्रस्तुत करने के अपार कष्ट के लिए धन्यवाद देने लगा। इस झोंक में यह बात उसके दिमाग से बिलकुल ही उतर गई कि उसे अगले आइटम के बारे में भी सूचना देनी है। अगले आइटम की कलाकार, अपने पैरों में घुंघरू बांधे बगल के कमरे में खड़ी अपने नाम और अपने नृत्य की घोषणा सुनने की प्रतीक्षा में बेचैनी के साथ उबासियां लेने लगी। पीछे खड़ा तबलावादक, अपने कला-प्रदर्शन के लिए अत्यधिक आतुर हो उठा और अपने उत्साह को न रोक पाने के कारण वहीं उकडूं बैठ अपने सामने रखे तबलों पर थाप देने लगा। चौंककर नर्तकी ने पीछे मुड़कर तबलावादक को देखा और इस क्रिया में उसके चंद घुंघरू 'रुनझुन' कर उठे। ये स्वर ड्राइंग-रूम तक पहुंच गए। मुरली जैसे सोते से जागी और अपनी ज़िम्मेदारियों का एहसास करती हुई, अपनी जगह से उठ लपककर अपने देवर के पास आई और उसके कान में खुस-पुस करने लगी। देवर की तन्मयता भंग हुई और उसे ध्यान आया कि नृत्य प्रस्तुत करनेवाली कलाकार को भी तो वह इतनी ही खुशामद के बाद यहां तक लाने के लिए तैयार कर सका है। गानेवाली कलाकार की इतनी प्रशंसा सुन नृत्य प्रस्तुत करनेवाली कलाकार के नन्हे से ईर्ष्यालु मन पर कितना भीषण 'असर' हो रहा होगा; और क्या इस 'असर' का 'असर' उनके नृत्य पर नहीं पड़ेगा ?···

देवर महोदय का नशा एकदम हिरन हो गया। एक झटके के साथ गायिका की प्रशंसा पर पूर्णविराम लगाते हुए उसने घोषणा की, "हां तो साहव, अव नृत्य की साकार प्रतिमा, कुमारी प्रतिमा मुखर्जी अपना ......"

उपस्थित मेहमानों ने देवर साहव के अभिनय पर रीझकर ज़ोर से तालियां वजाना और हंसना आरम्भ कर दिया और उनके उस शोर में देवर साहव की सूचना का उत्तरार्ध लगभग डूव-सा गया। खिसियाई मुस्कराहट चेहरे पर लिए देवरजी मंच से नीचे उतर आए। लोग हंसते-मुस्कराते ही रहे।

जयंती ने ऊवकर अब अपना सिर ऊपर उठाया और चारों ओर देखा। अपने चेहरों पर कॉस्मेटिक्स और मैक्स फैक्टर के स्टार लगाए हुए अनेक नारी-मुखमंडल उसकी ओर उत्सुकता के साथ देख रहे थे और अपने निकट बैठे व्यक्तियों से खुसुर-पुसुर कर रहे थे। कुछ सज्जन तो अपने नये सूटों में इस तरह अकड़े वैठे थे जैसे अभी 'वढेरा' या 'वैश्य' के यहां से ही चले आ रहे हों! जयंती को अपनी ओर देखता पाकर उनके चेहरों पर मुस्कराहटें इस तत्परता के साथ खिंच आईं जैसे उनकी मुस्कराहटों में इलास्टिक लगा हो। जयंती ने शीघ्रता से अपनी दृष्टि फिर नीचे कर ली। और किसी दिशा में देखने का उसे साहस ही न हुआ। उसका दिल धक्-धक् करने लगा।

कमरे में कुछ गरमी और घुटन महसूस कर, जयंती ने कनखियों से वाहर जाने के लिए किसी मार्ग की खोज की। उसके वायें हाथ वाला दरवाज़ा कॉरीडोर और उससे लगी छोटी-सी फुलवारी में खुलता था। मंच पर कुमारी प्रतिमा मुखर्जी और उनके तवलावादक के प्रवेश करने पर उपस्थित जन-समुदाय का ध्यान उस ओर आकर्षित हो गया था। यही अवसर उपयुक्त पाकर जयंती लोगों से दृष्टि वचा धीरे से दरवाज़े की ओर वढ़ आई और विना किसी आहट के कॉरीडोर में निकल आई।

कॉरीडोर में वहुत ही प्यारी चांदनी विछी हुई थी। चांदनी जितनी शीतल और प्यारी लग रही थी उतना ही ड्राइंग-रूम

छनकर बाहर आनेवाला शोर कर्कश और भद्दा लग रहा था। जयंती आगे बढ़, सीढ़ियां उतर नीचे बगीची में उतर आई और एक अशोक वृक्ष के नीचे बनी सीमेंट-बेंच पर बैठ गई। उसके चारों ओर चांदनी फैली हुई थी, केवल वही अंधेरे से घिरी हुई थी।

अंदर से आनेवाली घुंघरुओं की आवाज़ से जयंती ने अनुमान लगा लिया कि कुमारी प्रतिमा मुखर्जी का नृत्य आरम्भ हो गया है। जिस शक्ति और वेग से कुमारी प्रतिमा मुखर्जी मंच पर 'धप-धप' कर अपने पैर फेंक रही थीं, उससे तो जयंती को यही प्रतीति हुई कि कुमारी प्रतिमा तांडवनृत्य प्रस्तुत कर रही हैं।

'एमेच्युर' डांसर कुमारी प्रतिमा मुखर्जी का रूप और उनकी नृत्य-कला सभी दर्शकों को एक जैसा प्रभावित नहीं कर सकी—इस बात का आभास जयंती को तब हुआ जब उसने कॉरीडोर में होनेवाली पगचाप और उसके साथ ही कुछ पुरुष-स्वरों को अपने निकट आते सुना। जयंती का दिल धक्-धक् करने लगा। वह बेंच के उस अंधेरे हिस्से में और भी ज़्यादा सिकुड़ गई। उसने सुना—एक साहब फरमा रहे थे, "भई निगम, ज़िंदगी में अभी तक एमेच्युर होने के नाते कम से कम तुम्हें तो मन लगाकर एमेच्युर डांसर मिस प्रतिमा मुखर्जी का नाच देखना चाहिए था। तुम बीच नाच में से इस तरह उठकर क्यों चले आए?"

निगम साहब बोले, "यार, बात तो यह थी कि मिस प्रतिमा मुखर्जी का नाच मुझे काननबाला की याद दिला रहा था!"

"लेकिन काननबाला तो डांसर नहीं हैं!" एकसाथ दो स्वर बोल उठे।

"तो ये ही कौन-सी डांसर हैं!" निगम साहब ने तपाक से कहा और दूसरे ही क्षण तीनों व्यक्तियों का एक ज़ोरदार ठहाका वातावरण में गूंज उठा। "जहां तक डांस का सवाल है, ये प्रतिमा मुखर्जी भी काननबाला की ही बहिन हैं!" निगम साहब ने बात पूरी की। देर तक तीनों व्यक्ति हंसते रहे।

इन लोगों के इस निष्ठुर मज़ाक को नापसंद करने पर भी जयंती को यह महसूस कर संतोष हुआ कि तीनों व्यक्ति सीढ़ियों के पास ही

रुक गए थे और वहीं खड़े ठहाके लगा रहे थे। बगीची की ओर आने का उत्साह उनमें से किसीने प्रकट नहीं किया था।

किंतु जयंती का संतोष बहुत ही शीघ्र समाप्त हो गया। अपने चुस्त फिकरे के कारण प्रफुल्लित निगम साहब उस हंसी के बीच फरमा रहे थे, "भई, और तो जो कुछ बात है सो है, लेकिन ये मिस जयंती अचानक कहां गायब हो गईं ? एक तो आईं घंटा-भर देर से, दूसरे आते ही इस खूबसूरती से डॉज दिया कि हौदा तो गायब हुआ ही, साथ ही पैरों के निशान भी गायब !..."

जयंती की जैसे सांस रुक गई। वही बात हुई न, जिसका उसे डर था !...वह बेंच पर और भी ज़्यादा सिकुड़ गई, जैसे उन लोगों की बातें उसे छूने आ रही हों।

दूसरे साहब सिगरेट सुलगाते हुए निगम की ओर मुखातिब हुए, "बरखुरदार, तुम्हें मिस जयंती की क्या फिक्र पड़ गई ?"

अब तीसरे साहब को भी बोलने का अवसर मिला। दूसरे साहब से बोले, "भगवती, ऐसी नाज़ुक बातें मत पूछो। ये निगम साहब का दिली मामला है।"

दूसरे साहब, जिन्हें भगवती नाम से सम्बोधित किया गया था, बहुत ही गम्भीरता के साथ निगम से बोले, "तो यहां तक पहुंच गए हो बरखुरदार !...यार इन्हें तो बख्श दो !..."

निगम साहब को जैसे किसीने सुई चुभो दी। उन्होंने तड़पकर कहा, "भगवती भाई, इसमें बख्शने का कोई सवाल ही नहीं है। मैं इस बार बहुत ही सीरियस हूं। मुझे जयंती अज़हद पसंद हैं। आप लोग मेरी बात पर मुस्कराइए मत...यकीन मानिए, मैं मिस जयंती के एक-एक अंदाज़ पर मरता हूं।"

मुस्कराने तक का आदेश न होने पर भी मिस्टर भगवती और दूसरे सज्जन ने एक अक्लमंदाना कहकहा लगाया। निगम साहब पहले तो खिसियाए-से उन दोनों को देखते रहे, फिर खुद भी हंसने लगे।

ये तीनों हंस रहे थे; लेकिन जयंती का मन [illegible] रा।
वह क्यों आई थी मुरली की पार्टी में ? यह [illegible] के

जयंती के अस्तित्व से अनभिज्ञ वे तीनों महानुभाव हिल-हिल-
र हंसते और हंस-हंसकर हिलते हुए बातें कर रहे थे। मिस्टर
गवती दुनिया-देखी टोन में कह रहे थे, "तो बेटा निगम, तुम इसी
रह खामोश तरीके से मरते रहो मिस जयंती पर ! हाथ-पल्ले तो
म्हारे कुछ पड़ने से रहा।...यह तो तय ही समझो...मिस जयंती
मसे तो शादी करने से रहीं....."

दूसरे साहब निगम का पक्ष लेते हुए बोल उठे, "इससे क्या ?
अपने निगम को तो तसकीन है ; क्योंकि मिस जयंती किसीसे भी
ादी नहीं कर रही हैं..." फिर अपनी आवाज़ धीमी कर इस तरह
ोले, जैसे भेद की बात बता रहे हों, "सच तो यह है कि मिस जयंती
का शादी करने का इरादा ही नहीं है।"

निगम साहब को सचमुच जैसे इस समय तीर-सा लगा। तड़प-
कर बोल उठे, "यह तुमसे किसने कहा विक्रम ? मिस जयंती शादी क्या
अपने-आपसे कर लेंगी ?...बताओ...जब तक कोई उनके पास ज़ाकर
ढंग से उनसे 'प्रपोज़' नहीं करेगा और उन्हें राज़ी नहीं करेगा, वे
क्या हवा से शादी रचाएंगी ?"

दूसरे साहब—यानी मिस्टर विक्रम—कुछ हतप्रभ हो निगम
साहब की बातों के जवाब में कुछ कहने का उपक्रम कर ही रहे थे कि
मिस्टर भगवती बोल उठे, "निगम साहब, आप कहना चाहते हैं कि
अभी तक किसी नौजवान ने मिस जयंती के पास शादी का प्रस्ताव
ही नहीं भेजा है ? या ज़िन्दगी के चौबीस-पच्चीस साल घर से बाहर
की दुनिया में गुज़ार देने पर भी मिस जयंती को अभी तक अपनी
पसन्द का कोई नौजवान नहीं दीख पड़ा है, जिससे शादी कर वे
अपने ज़िन्दगी का अधूरापन मिटा सकें ?" मिस्टर भगवती खासे
गम्भीर हो गए थे।

निगम कुछ खिन्न होकर इधर-उधर देखता हुआ बोला, "आप
लोग नहीं समझेंगे !"

गियर बदलकर मिस्टर भगवती ने अपना लघु भाषण फिर जारी
किया, "मैं तो सचमुच ज़्यादा कुछ नहीं समझता, लेकिन आप भी

तो थोड़ा-वहुत समझने की कोशिश कीजिए निगम साहव ! मिस जयंती एम० ए० हैं···यूनियन की एक्टिविटीज़ में भी वड़ी दिलचस्पी से भाग लेती रही हैं···यह मैं मान ही नहीं सकता कि इस वीसवीं सदी की कोई लड़की यूनिवर्सिटी में लड़कों के साथ चार-पांच साल तालीम पाने के वाद भी किसी नौजवान को पसन्द ही न कर पाए।···और फिर मिस जयंती इतनी सुन्दर, सभ्य और सलीकेदार हैं···क्या यूनिवर्सिटी के किसी भी भले और 'व्राइट' लड़के को वे इम्प्रेस नहीं कर पाई होंगी ?···मेरा तो खयाल है कि मिस जयंती किसीके प्रेम में मुब्तिला हैं और उस नौजवान के फाइनल जवाव का इन्तज़ार कर रही हैं।"

इस दौरान निगम साहव की खिन्नता और वढ़ गई थी। उसी तरह खोई-सी दृष्टि से इधर-उधर देखते हुए उन्होंने अनमने भाव से फरमाया, "यह आपका महज़ खयाल है। देखा जाए तो सचाई इससे कोसों दूर है।"

निगम साहव के चुप होते और मिस्टर भगवती के कुछ वोल उठने के पहले ही विक्रम वावू ने अपना भाषण आरम्भ कर दिया, "भगवती गुरु, मेरा खयाल यह है कि मिस जयंती कभी शादी करेंगी ही नहीं। तुमने नोट किया होगा—और अगर अभी तक नहीं किया तो अव नोट कर लेना—मिस जयंती के चेहरे से अव एक संजीदगी, एक प्रोफेसरपना-सा झलकने लगा है। हमेशा वे किसी मोटी किताव या पतली मैगज़ीन में डूवी रहती हैं। लोगों से ज़्यादा हंसती, वोलती, मिलती नहीं। परिचितों से कतराती हैं···" फिर अपनी आदत के अनुसार अपनी आवाज़ धीमी कर इस तरह वोलने लगे, जैसे कोई वहुत वड़े भेद की वात वता रहे हों, "सच मानो, अव तो लोग-वागों पर मिस जयंती का रोव पड़ने लग गया है। लोग अक्सर उन्हें देख चहकने के वजाय झिझककर सहमने लग गए हैं···सचाई यह है कि मिस जयंती में अव एक नवयुवतीवाली कशिश नहीं रही है।"

और अधिक खिन्न होने के वजाय निगम साहव विक्रम वावू की इस वात पर कुढ़ गए। चिढ़कर वोले, "यह तुम अपना जिक्र कर रहे हो विक्रम ! मिस जयंती में नहीं, तुममें अव सचमुच कोई कशिश

नहीं रही। तुम्हारा चेहरा ही नहीं, तुम्हारा दिल भी बुझ गया है!"

विक्रम बाबू के चेहरे पर मुस्कराहट आ गई। अपनी हलकी मूंछ उमेठते हुए वे बहुत इतमीनान से बोले, "मेरा दिल अभी तक जवान है निगम साहब! और रही बात कशिश की; तो मुझमें अभी तक कितनी कशिश है, यह तुम अपनी भाभी से पूछ लेना। अन्दर बैठी डांस देख रही हैं।"

निगम साहब प्रत्युत्तर में कुछ कहने ही जा रहे थे कि एक स्त्री-स्वर ने उन्हें चौंका दिया और वे हड़बड़ाकर चुप हो गए। स्त्री-स्वर कह रहा था, "सच कहते हो। तुममें कशिश न होती तो तुम्हें देखती-देखती यहां कैसे आ पहुंचती!"

खिसियाई-सी मुस्कराहट के साथ विक्रम बाबू ने कॉरीडोर में आ खड़ी हुई महिला की ओर उन्मुख होकर कहा, "आओ विन्दु, आओ। तुम्हारा ही जिक्र हो रहा था। तुम्हारी उम्र बढ़ गई!"

महिला के आगमन से जयंती की जड़ता जैसे टूट गई। महिला का स्वर सुन जैसे उसका भय एकदम दूर हो गया। उसे यह प्रतीति हुई, अब वह निरापद है। थोड़ा साहस कर उसने देखा—कॉरीडोर में तीन पुरुषों और एक महिला की आकृति दीख रही है। कम रोशनी के कारण उत्पन्न उस अंधेरे-से में दो व्यक्तियों की सिगरेटों के सिरे चमक रहे हैं।

जयंती ने ध्यान दिया। महिला कह रही थीं, "उम्र बढ़ाने के लिए शुक्रिया। यह तो बतलाइए, यहां इस सुनसान बरामदे में किस चीज़ को लेकर बहस की जा रही है?"

विक्रम बाबू के कोई ऊटपटांग उत्तर दे स्थिति बिगाड़ने से पहले ही मिस्टर भगवती ने सच बात कह स्थिति सुधारने की कोशिश की। "भाभी," उन्होंने कहा, "हम लोग मिस जयंती को लेकर परेशान हैं। अपने निगम की हालत खराब है…आखिर मिस जयंती शादी क्यों नहीं करतीं? उन्हें इन्तज़ार किस बात का है?"

जयंती का दिल फिर धक्-धक् करने लगा—हाय! अब विन्दु के सामने भी उसीको लेकर बहस की जाएगी और बिंदु भी चटखारे लेकर इस बहस में हिस्सा लेगी।…उसने सुनने की कोशिश की,

उसके बारे में बिंदु के क्या विचार हैं ? बिंदु धीमे स्वर में कुछ सोचती हुई सी कह रही थी, "मेरे खयाल से जयंती किसी 'परफैक्ट मैन' का इन्तज़ार कर रही है, जो फिल्म के हीरो की तरह सजीला, हंसमुख, चुस्त व ज़िन्दादिल, एक अच्छा कवि, लेखक, क्रिकेट या हॉकी का मशहूर खिलाड़ी, बड़ा अच्छा डिबेटर, रेडियो-सिंगर, चित्रकार, कलाकार, बिज़नेस-मैन, ढेर सारी दुकानों और बंगले-कोठियोंवाला होगा। सारे हिन्दुस्तान-भर में वह अपने ढंग का अकेला ही होगा। ऐसा पति आज तक हिन्दुस्तान में अभी तक किसी लड़की को न मिला होगा।"

निगम साहब जैसे बिंदु के बात समाप्त करने की प्रतीक्षा कर रहे थे। फौरन बोल उठे, "भाभी, ऐसा पति तो इस ज़िन्दगी में उन्हें नसीब हो चुका !"

बिंदु ने भी उसी फुरती से उत्तर दिया, "तो फिर मिस जयंती की भी इस ज़िंदगी में शादी हो चुकी !" फिर निगम के उतरते हुए चेहरे को देख, हाथ जोड़ती हुई बनावटी गम्भीरता के साथ बोली, "निगम साहब, दिल तोड़ने के लिए माफ कीजिएगा।"

निगम साहब के अतिरिक्त शेष सब व्यक्तियों ने एक जानदार ठहाका लगाया। निगम साहब ने सहयोग नहीं दिया; न ही सहयोग देने के आसार दिखाए। उनकी उदासी और पीड़ा को महसूस करती हुई बिंदु ने कुछ गम्भीर होने की कोशिश करते हुए मिस्टर भगवती से कहा, "अब छोड़िए इस किस्से को। आप लोगों ने भी कहां पराई चर्चा शुरू की !"

मिस्टर भगवती ने इशारा नहीं समझा, न ही निगम के उतरे चेहरे की ओर देखा। मुस्कराते हुए वे बोले, "भाभी, आज की इस माडर्न सोसायटी में तो पराये आदमी-औरतों की चर्चा करना सभ्यता की निशानी माना जाता है। आखिर आदमी एक सिविल जानवर ही तो है !"

बिंदु ने आंख झपक निगम की ओर इशारा करते हुए मिस्टर भगवती से कहा, "अरे छोड़िए। इतनी प्यारी चांदनी रात बहस के लिए नहीं बनी है।" फिर विक्रम बाबू का हाथ पकड़ बोली, "डार्लिंग,

जयंती तो भरी बैठी थी। उसका सारा क्रोध और आवेश पुष्पा पर निकला। गुस्से में वह बोलती चली गई और न जाने क्या-क्या कह गई, "हां, तुम कह सकती हो कि मैं अपने से छिपी बैठी हूं; पर सचाई यह है कि मैं तुम्हारे समाज के इन सभ्य और सुसंस्कृत असभ्यों से छिपकर यहां बैठी हूं, जिनका पराई चर्चा के अलावा और कोई काम नहीं है···और चर्चा भी कितने घटिया स्तर की !···दूसरों के बारे में गलत-सलत फतवे दिए बिना तो जैसे इन लोगों का खाना हज़म नहीं होता···मैं इन सभ्य असभ्यों से बुरी तरह ऊब चुकी हूं और सीरियसली सोच रही हूं कि कहीं दूर निकल जाऊं और किसी शांत-अकेली जगह में बस जाऊं, जहां कोई भी मुझे न जाने और मेरी शांति में दखल न दे···हां, तुम तो यह सब सुनकर मुस्कराओगी ही···तुमपर पड़े तो तुम्हें पता चले···तुम्हें तो मेरी बातें शुद्ध बकवास लग रही होंगी !···" और क्रोध के आवेश में वह चुप हो गई।

पुष्पा के साथ कठिनाई यह थी कि उसने आज तक ज़िंदगी को सीरियसली नहीं लिया था और न ही भविष्य में उसका इस तरह का कोई इरादा था। जयंती के क्रोध पर उसे हंसी आती रही। जब उसे मुस्कराती देख जयंती गुस्से के कारण चुप हो गई तो आगे बढ़ उसने जयंती के गले में अपनी दोनों बांहें डाल दीं और गम्भीर होने की असफल चेष्टा करती हुई बोली, "देख लाड़ली, दिल फटनेवाली बातें न कर। मुझे तेरी बातें बकवास नहीं लग रही हैं। मैंने तो बड़े ध्यान से तेरी समस्या को सुना है···मुझे इसमें तीन बातें नज़र आ रही हैं—पहली यह कि समस्या सचमुच ही टेढ़ी है; दूसरी यह कि इसके बारे में ध्यान से सोचना होगा; और तीसरी यह कि इस चर्चा को कल शाम तक के लिए पोस्टपोन किया जाए और ड्राइंग-रूम में चलकर मुरली के एरेंज किए हुए उत्सव के आखिरी आइटम को देख लिया जाए, ताकि मुरली हमारी गैरहाज़िरी का बुरा मान हमसे शिकायत न करे !"

जयंती कुछ क्षण अनिश्चय की अवस्था में खड़ी रही; फिर सामने खड़ी मुस्कराती हुई पुष्पा को एक नज़र देख उसके साथ पराजित

भाव से चलने लगी।

जिस समय ये दोनों सहेलियां दबे पांव ड्राइंग-रूम में पहुंचीं, वह छोटा हॉल आधा खाली हो चुका था; लेकिन इसके बावजूद एक मोटी-सी देवीजी, एक प्रचलित फिल्मी धुन पर अपनी नृत्यकला का प्रदर्शन कर रहीं थीं।

नित्य नियमानुसार जयंती की चाची श्रीमती राजेश्वरीदेवी ने चाय के दो कप पिए और स्नान-ध्यान आदि से निवृत्त होने के लिए फुर्ती से डायनिंग-टेबल से उठ गईं। मैदान खाली देख, उपयुक्त अवसर की तलाश में बैठी जयंती ने प्रभु का नाम ले, साहस एकत्रित करते हुए, अखबार में अपनी दृष्टि गड़ाए बैठे अपने चाचा राय नौरंगीलाल का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की कोशिश की। कांपते-से स्वर में वह बोली, "चाचाजी!"

राय नौरंगीलाल ने अखबार से अपनी दृष्टि हटाई और जयंती को अच्छी तरह देख जैसे उसका अध्ययन-सा करते हुए कहा, "हां बेटा, बोलो···तुम्हारी आवाज़ क्यों कांप रही है?"

जयंती का एकत्रित साहस एकदम जवाब दे गया। चाचा को लगातार अपनी ओर देखते पाकर उसे लगा कि कुछ बोलना आवश्यक है। अटकते-से हुए उसने कहा, "चाजाजी···मैं कल मुरली के यहां गई थी न!···"

राय नौरंगीलाल बिना पलक झपकाए अपनी इस लाड़ली भतीजी और उसके नन्हे व अपरिपक्व मस्तिष्क के अन्दर होनेवाली हलचल को पढ़ते रहे, तब एक बहुत अच्छी स्मृतिवाले उपन्यास-पाठक की तरह बोले, "हां, मुरली के यहां कोई बात ऐसी हो गई जिसकी

जयंती तो भरी बैठी थी। उसका सारा क्रोध और आवेश पुष्पा पर निकला। गुस्से में वह बोलती चली गई और न जाने क्या-क्या कह गई, "हां, तुम कह सकती हो कि मैं अपने से छिपी बैठी हूं; पर सचाई यह है कि मैं तुम्हारे समाज के इन सभ्य और सुसंस्कृत असभ्यों से छिपकर यहां बैठी हूं, जिनका पराई चर्चा के अलावा और कोई काम नहीं है···और चर्चा भी कितने घटिया स्तर की !···दूसरों के बारे में गलत-सलत फतवे दिए बिना तो जैसे इन लोगों का खाना हजम नहीं होता···मैं इन सभ्य असभ्यों से बुरी तरह ऊब चुकी हूं और सीरियसली सोच रही हूं कि कहीं दूर निकल जाऊं और किसी शांत-अकेली जगह में बस जाऊं, जहां कोई भी मुझे न जाने और मेरी शांति में दखल न दे···हां, तुम तो यह सब सुनकर मुस्कराओगी ही···तुमपर पड़े तो तुम्हें पता चले···तुम्हें तो मेरी बातें शुद्ध बकवास लग रही होंगी !···" और क्रोध के आवेश में वह चुप हो गई।

पुष्पा के साथ कठिनाई यह थी कि उसने आज तक ज़िंदगी को सीरियसली नहीं लिया था और न ही भविष्य में उसका इस तरह का कोई इरादा था। जयंती के क्रोध पर उसे हंसी आती रही। जब उसे मुस्कराती देख जयंती गुस्से के कारण चुप हो गई तो आगे बढ़ उसने जयंती के गले में अपनी दोनों बांहें डाल दीं और गम्भीर होने की असफल चेष्टा करती हुई बोली, "देख लाड़ली, दिल फटनेवाली बातें न कर। मुझे तेरी बातें बकवास नहीं लग रही हैं। मैंने तो बड़े ध्यान से तेरी समस्या को सुना है···मुझे इसमें तीन बातें नज़र आ रही हैं—पहली यह कि समस्या सचमुच ही टेढ़ी है; दूसरी यह कि इसके बारे में ध्यान से सोचना होगा; और तीसरी यह कि इस चर्चा को कल शाम तक के लिए पोस्टपोन किया जाए और ड्राइंग-रूम में चलकर मुरली के एरेंज किए हुए उत्सव के आखिरी आइटम को देख लिया जाए, ताकि मुरली हमारी गैरहाज़िरी का बुरा मान हमसे शिकायत न करे !"

जयंती कुछ क्षण अनिश्चय की अवस्था में खड़ी रही; फिर सामने खड़ी मुस्कराती हुई पुष्पा को एक नज़र देख उसके साथ पराजित

भाव से चलने लगी।

जिस समय ये दोनों सहेलियां दबे पांव ड्राइंग-रूम में पहुंचीं, वह छोटा हॉल आधा खाली हो चुका था ; लेकिन इसके बावजूद एक मोटी-सी देवीजी, एक प्रचलित फिल्मी धुन पर अपनी नृत्यकला का प्रदर्शन कर रहीं थीं।

नित्य नियमानुसार जयंती की चाची श्रीमती राजेश्वरीदेवी ने चाय के दो कप पिए और स्नान-ध्यान आदि से निवृत्त होने के लिए फुर्ती से डायनिंग-टेबल से उठ गईं। मैदान खाली देख, उपयुक्त अवसर की तलाश में बैठी जयंती ने प्रभु का नाम ले, साहस एकत्रित करते हुए, अखबार में अपनी दृष्टि गड़ाए बैठे अपने चाचा राय नौरंगीलाल का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने की कोशिश की। कांपते-से स्वर में वह बोली, "चाचाजी !"

राय नौरंगीलाल ने अखबार से अपनी दृष्टि हटाई और जयंती को अच्छी तरह देख जैसे उसका अध्ययन-सा करते हुए कहा, "हां बेटा, बोलो···तुम्हारी आवाज़ क्यों कांप रही है ?"

जयंती का एकत्रित साहस एकदम जवाब दे गया। चाचा को लगातार अपनी ओर देखते पाकर उसे लगा कि कुछ बोलना आवश्यक है। अटकते-से हुए उसने कहा, "चाजाजी···मैं कल मुरली के यहां गई थी न !···"

राय नौरंगीलाल बिना पलक झपकाए अपनी इस लाड़ली भतीजी और उसके नन्हे व अपरिपक्व मस्तिष्क के अन्दर होनेवाली हलचल को पढ़ते रहे, तब एक बहुत अच्छी स्मृतिवाले उपन्यास-पाठक की तरह बोले, "हां, मुरली के यहां कोई बात ऐसी हो गई जिसकी

वजह से तुम परेशान हो गईं। रात तुम लौटीं तो तुम्हारा चेहरा उतरा हुआ था। मेरा ख्याल था कि सुबह तक तुम ठीक हो जाओगी; लेकिन अभी तक कलवाली बात का असर तुमपर बाकी है···इतना मुझे मालूम है। इसके आगे की कहानी अगर तुम बिना किसी लम्बी भूमिका के मुझे सुना डालो तो बहुत अच्छा हो। तुम्हारा भी मन हलका हो जाए और मेरी भी जिज्ञासा शांत हो जाए!"

जयंती को लगा—उसे चाचा को स्थिति समझाने में अधिक श्रम न करना पड़ेगा। इसलिए बिना किसी लम्बी-चौड़ी भूमिका के उसने बात आरम्भ की, "चाचाजी···मैं अब दिल्ली में नहीं रहना चाहती!"

राय नौरंगीलाल ने इस तरह सिर हिलाया, जैसे कह रहे हों—मैं पहले ही जानता था, इसी तरह की कोई बात होगी। प्रकट में बोले, "ख्याल तो बुरा नहीं है। मगर अचानक ही यह निश्चय कर लेने की क्या वजह है?"

जयंती कुछ क्षण चुप रही, फिर शहीदों के अंदाज़ में बोली, "बात यह है चाचाजी कि मैं आपकी और अपनी इस तहज़ीबयाफ्ता सोसायटी से तंग आ गई हूं। मुझे यहां एक-एक पल भारी हो रहा है।"

इस बार राय नौरंगीलाल ने उसे देखते हुए संक्षिप्त-सा ही प्रश्न किया, "सोसायटी से क्यों तंग आ गई हो?"

जयंती सोचते-सोचते बोली, "चाचाजी, दूसरों की व्यक्तिगत और निजी ज़िन्दगियों में फूहड़ किस्म की दिलचस्पी रखने के अलावा जैसे इन सोसायटीवालों के पास और कोई काम है ही नहीं।" फिर कुछ रुक, नई सांस लेती हुई कुछ आवेश से बोलने लगी, "कल मुरली की पार्टी की ही बात है—'जयंती को क्या हो गया है?'···'आखिर वह शादी क्यों नहीं करती?'···'किससे करेगी शादी?'··· 'अब उससे कौन शादी करेगा?'···'देखा नहीं, उसके चेहरे से बुज़ुर्गियत-सी टपकने लगी है'···'उसमें अब आकर्षण ही नहीं रहा है'···'शायद जयंती किसीसे प्रेम करती है और उसके फाइनल जवाब का इंतज़ार

कर रही है'…गरज़ यह कि जितने मुंह, उतनी तरह की भौंडी और गलत-सलत बातें। मुझे कुंआरी देख, जैसे सबके सिर में दर्द हो रहा था!…चाचाजी, एक अरसे से मैं चुपचाप इस तरह की बदतमीजियों को बर्दाश्त कर रही थी; लेकिन अब मेरे लिए इस सबको सहना मुश्किल हो उठा है। इस वातावरण में जैसे मेरा दम-सा घुटने लगा है। मैं अब किसी शांत व अकेली जगह चली जाना चाहती हूं, जहां लोग मेरी निजी ज़िन्दगी में गैरज़रूरी दिलचस्पी न लें और गाहे-बगाहे मुझे न कुरेदें!…वैसे भी मैं अब बच्ची नहीं रही हूं…अपनी और अपने पैसे की हिफाज़त कर सकती हूं।"

राय नौरंगीलाल चुपचाप सुनते रहे; फिर कुछ देर चुप रह जैसे मन ही मन अपना उत्तर तैयार करते रहे। तब स्वर धीमा कर बहुत शांत भाव से बोले, "देखो बेटा, मैंने भाई साहब से—यानी तुम्हारे पिताजी से—तुम तीनों बहिनों की व तुम्हारे पैसे और जायदाद की देखभाल का वायदा किया था। मैंने इस सम्बन्ध में आज तक जो कुछ किया, वह तुम्हारे सामने है। सन्ध्या और छोटी ने शादी कर ली है। बस, अब तुम रह गई हो। अब तुम्हारा भी विवाह हो जाए तो मुझे मुक्ति मिले और मैं गंगास्नान करूं। तुम्हारे विवाह से मुझे यह सन्तोष हो जाएगा कि मैंने अपना वचन पूरी तरह निभाया है। तुम खुद ही सोचो, मैं तुम्हें इस तरह बीच मंझधार में तुम्हारे भाग्य पर कैसे छोड़ सकता हूं!…"

जयंती का धैर्य चाचा की इस बात पर उसका साथ छोड़ गया। झल्लाए स्वर में वह बोली, "चाचाजी, और लोगों की तरह आप भी यही चाहते हैं कि मैं पढ़-लिखकर कभी का विवाह कर चुकी होती और अब तक घर-गृहस्थी की दलदल में गले तक फंसी हुई होती! तभी आपको भी सन्तोष होता!…आखिर शादी करने, घर बसाने और बच्चों को जन्म देने के अलावा स्त्री के लिए दुनिया में कोई दूसरा काम है ही नहीं!…" और चाचा के चेहरे पर [illegible] भाव को देख, अचानक ही अपने स्वर की तेजी को कम करते हुए कहने लगी, "और अगर स्त्री के लिए दुनिया में [illegible] क्या यह बहुत आवश्यक है कि वह [illegible]

हो सकता ?…"

राय नौरंगीलाल के चेहरे पर मुस्कराहट आ गई; फिर यह सोच कि जयंती उन्हें देख रही होगी, उन्होंने गम्भीर होने की कोशिश की। बहुत ही संजीदगी के साथ उन्होंने कहना शुरू किया, "तुम ठीक कहती हो बेटा। मैं तुम्हारी बातों को गलत नहीं मानता, न ही उन्हें काटने की कोशिश कर रहा हूं। मैं तो तुम्हें तस्वीर का सिर्फ दूसरा पहलू दिखला रहा हूं। ज़माना बहुत खराब है बेटा…बहुत मुमकिन है तुम्हें अकेली और इतने सारे पैसे के साथ देख कोई चार सौ बीस कोई जाल रचाए और तुम अपने सरल स्वभाव के कारण मुसीबत में पड़ जाओ!…इस कारण मेरी तो नेक राय यह है कि तुम अब जल्दी ही किसी नेक, योग्य और अच्छे घराने के भले नौजवान से शादी कर लो, जो ईमानदार और मेहनती हो और जिसे तुम्हारे पैसे और तुम्हारी जायदाद का बिलकुल भी लालच न हो…ऐसा करने से तुम्हें तुम्हारा सारा हिस्सा भी मिल जाएगा; लोग भी तुम्हारी तरफ उंगली उठाना बन्द कर देंगे; और तब तुम मनाली, कुलू या जहां भी तुम्हें शांति मिले, वहां आसानी से बस भी सकोगी…और साथ ही इस बूढ़े को भी अपने इस तीसरे पहर में तुम्हारी चिंता और ज़िम्मेदारी से छुटकारा मिल जाएगा…मैं समझता हूं, अब और ज़्यादा बहस की गुंजाइश नहीं है।"

अखबार की सिलवटें दूर करते हुए राय नौरंगीलाल कुर्सी से धीरे-धीरे ड्राइंग-रूम में चले गए।

खामोश बैठी जयंती की आंखों में आंसू आ गए। देर तक वह उसी तरह खोई-सी बैठी रही। उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह क्या करे।…उसका बस चलता तो अटैची में चन्द ज़रूरी कपड़े लगा वह उसी समय दिल्ली छोड़ देती…लेकिन बिना पैसे के यह बात सम्भव न थी। और बिना पैसे के घर से निकलने पर, आ पड़नेवाली कठिनाइयों का अनुमान उसे था। इस कारण वह किंकर्तव्यविमूढ़ बैठी रही।

कुछ ध्यान आने पर उसने उठकर पुष्पा को फोन किया। पुष्पा थोड़ी ही देर पहले घर से निकल चुकी थी, इस कारण उसने पुष्पा की छोटी बहिन कुसुम से ही कह दिया कि शाम को पुष्पा को जयंती

के यहां अवश्य भेज दे—वह पांच और छः के बीच पुष्पा का इन्तज़ार करेगी और जब तक पुष्पा नहीं आ जाएगी, घर से बाहर नहीं निकलेगी।

जयंती के बिस्तर पर अधलेटी पुष्पा ने लॉलीपॉप खाते हुए, जयंती से सारी बातें सुनीं। फिर बड़े इतमीनान से कहा, "हां, चाचाजी के विचारों से तो मैं अच्छी तरह परिचित हो गई। अब मैं यह जानना चाहती हूं कि तुम्हारे क्या विचार हैं।"

"सुबह तक तो मेरे कुछ भी विचार नहीं थे। उस समय तो बड़ा अंधेरा-अंधेरा-सा लग रहा था; लेकिन दिन-भर में मैंने सोच-विचारकर निश्चय कर लिया है कि मैं इसी हफ्ते में समय देख, एक बार फिर चाचाजी से प्रार्थना करूंगी। और अगर इस बार भी उन्होंने वही टका-सा जवाब दिया तो मैं एक दिन चुपचाप घर से निकल पड़ूंगी और कहीं बाहर जाकर किसी स्कूल या कॉलेज में प्रोफेसरी कर लूंगी...और शांति के साथ अपना जीवन बिताऊंगी... थोड़ी तलाश के बाद नौकरी मुझे मिल ही जाएगी...आखिर मैं एम० ए० हूं।" जयंती ने बहुत आत्मविश्वास के साथ पुष्पा के प्रश्न का उत्तर दिया।

जयंती की बच्चों जैसी बातों पर पुष्पा को हंसी आ गई; लेकिन जयंती की नाराज़ी का ध्यान कर वह एकदम खामोश हो गई। अपने चेहरे पर गम्भीरता की नकाब लगाती हुई वह बोली, "लाडो, ख्याल तो तुम्हारा दुरुस्त है; लेकिन घर से इस तरह चुपचाप निकल जाने पर शहर में जो बातें होंगी, क्या वे तुम्हें चैन से बैठने देंगी?... और फर्ज़ करो, अगर चाचाजी ने अखबार में तुम्हारा फोटो व गुमशुदा का इश्तहार—५०० रुपये के इनाम के साथ—दे दिया, तब तुम क्या लोगों से मुंह छिपाती फिरोगी?...और तब तुम्हें पहचान प्रोफेसरी ही कौन देगा?..."

जयंती को सोच में डूबी देख पुष्पा का हौसला बढ़ गया। साथ ही उसने अपने अन्दर एक अपूर्व शक्ति भी महसूस की। उसीके सहारे उसने नये वेग से बोलना आरम्भ किया, "और मान लो लाडो,

मिल जाए…"

जयंती को तल्लीनतापूर्वक सुनती देख, पुष्पा को लगा—तीर सही जगह पहुंचा है। उसकी बात जयंती की समझ में आ गई है। प्रसन्नतापूर्वक उसने अपने पर्स से दूसरा लॉलीपॉप निकाला और बिस्तर पर अच्छी तरह लेटकर उसे खाना आरम्भ कर दिया। जयंती उसी तरह बैठी अपने भविष्य के बारे में सोचती रही।

सुबह रामा को ढेर सारे अखबार जयंती के कमरे में ले जाते देख, जयंती की चाची श्रीमती राजेश्वरीदेवी को अचरज, कौतूहल, बेचैनी—कई सारी चीज़ें एकसाथ शिद्दत से महसूस हुईं। स्नान आदि से निवृत्त हो वे पूजा पर बैठी हुई थीं। राजेश्वरीदेवी पूजा के समय बोलती नहीं थीं, लेकिन हाथ, उंगली या आंखों के इशारे से के आसन पर बैठी-बैठी ही, घर की समस्त गतिविधियों का करती रहती थीं। उनका ख्याल था कि यदि वे इतनी जागरूक न रहें तो शायद ड्राइंग-रूम में लगी दीवार-घड़ी भी अपनी सुई न सरकाए, नौकर-चाकरों की तो बात ही छोड़ दीजिए।

यह महज़ रामा का दुर्भाग्य ही था कि ध्यान बंटा होने के कारण वह पूजा पर बैठी राजेश्वरीदेवी के हवाईजहाज़ के प्रॉपेलर की तरह हिलते दोनों हाथों को न देख पाया और अपनी धुन में अखबार हाथ में लिए आगे ही बढ़ता चला गया। नौकर की इस बेध्यानी से राजेश्वरीदेवी के मन में खलबली मच गई। उनके लिए पूजा के आसन पर और अधिक देर बैठे रहना असह्य हो गया। जल्दी-जल्दी पूजा समाप्त कर और प्रभु से शीघ्र ही पूजा समाप्त कर देने के लिए दो बार क्षमा मांगकर, वे अपनी चादर संभालती

उठ खड़ी हुईं और दरवाज़े के निकट आ गईं ताकि जयंती के कमरे से लौटते रामा को वहीं आड़े हाथों ले सकें।

हरि-इच्छा से उन्हें अधिक प्रतीक्षा न करनी पड़ी और शीघ्र ही उनकी मनोकामना पूरी हो गई। गाफिल रामा पर वह बेभाव की पड़ीं कि उसके होश ठिकाने आ गए। राजेश्वरीदेवी धाराप्रवाह बोलती गईं और बेचारा रामा सिर झुकाए चुपचाप सुनता रहा। जब राजेश्वरीदेवी का मन हलका हो गया, तब उन्होंने असली प्रश्न किया, "आज घर में इतने सारे अखबार कैसे आए ?···और तुम उन्हें ले कहां गए थे और छोड़ कहां आए ?"

रामा ने अपने सामान्य ज्ञान का परिचय देते हुए कहा, "मांजी, मेरे ख्याल से जयंती बीबीजी ने ही इतने सारे अखबार मंगवाए थे, तभी तो बड़े बाबूजी ने उनमें से एक अखबार अपने लिए रखकर बाकी मुझे जयंती बीबी को दे आने के लिए बोला था !···"

'बड़े बाबूजी' को भी इस घटना से सम्बद्ध देख राजेश्वरीदेवी का पारा एकदम दो-तीन डिग्री नीचे आ गया। रामा को बख्श उन्होंने अपना मोरचा 'बड़े बाबूजी' की ओर केन्द्रित किया और सिर झटकती, रबर की चट्टियां चटचटाती तथा अपनी चादर हिलाती वे डाइनिंग-रूम की ओर बढ़ीं।

अपने नकली दांत प्याली में रखे पोटाश-पानी में डालकर 'बड़े बाबूजी'—यानी राय नौरंगीलाल—इतमीनान से पैर हिलाते हुए अखबार पढ़ रहे थे। अपनी धर्मपत्नी को वेग से आते देख उनका माथा ठनका और अपनी सुरक्षा के लिए वे संभलकर बैठ गए। पहला वार उन्हींकी ओर से हुआ, "हां भाई, सुबह-सुबह ही क्या बात हो गई ?"

राजेश्वरीदेवी ने ज़मीन पर लटक आई चादर को बगूले-सी तेज़ी से उछालकर अपने कंधे पर डालते हुए प्रश्न किया, "एक बात बताना जी। ये मुए रोज़ाना अखबार भी साप्ताहिक और मासिक अखबारों की तरह अलग-अलग तरह की चीज़ें और अलग-अलग तरह की खबरें छापने लगे ?"

"नहीं तो," राय नौरंगीलाल ने अधिकारपूर्वक उत्तर दिया,

"खबरें तो एक ही होती हैं और शब्दों के थोड़े-बहुत हेर-फेर के साथ सब अखबार उन्हींको छापते हैं।...खबरें कोई मन से थोड़े ही गढ़ता है ?"

"अच्छा !" राजेश्वरीदेवी ने व्यंग्यपूर्वक कहा, "तो फिर आज से अखबार की रद्दी के दाम बढ़ गए होंगे ? ढाई आने का अखबार रद्दी में तीन आने में जाने लगा होगा ?"

"नहीं तो," राय नौरंगीलाल ने बहुत सादगी के साथ कहा, हालांकि वे मन ही मन समझ रहे थे कि उनकी श्रीमतीजी का इशारा किस तरफ है। "ऐसी भी कोई बात नहीं।" उन्होंने अपनी श्रीमतीजी को देखते हुए वाक्य पूरा किया।

"तब फिर आज ये इतने सारे अखबार किसलिए मंगवाए गए ?" बिना लाग-लपेट के श्रीमती राजेश्वरीदेवी ने अपना सवाल सामने रखा।

राय नौरंगीलाल आज शांत रहने पर तुले थे। बिना किसी उत्तेजना के उन्होंने उत्तर दिया, "जयंती को जरूरत थी। उसने कहा था।"

"क्यों ?" राजेश्वरीदेवी के स्वर में तीखापन आ गया था।

झील में शांत बहती-तिरती नाव के समान राय नौरंगीलाल ने मिठास के साथ उत्तर दिया, "शायद वह अपने लिए कोई अच्छी नौकरी ढूंढ़ना चाहती है। अलग-अलग अखबारों में अलग-अलग विज्ञापन होते हैं। हो सकता है, इतने सारे अखबारों में किसी एक दिन उसे ढंग की नौकरी का विज्ञापन मिल जाए !"

राजेश्वरीदेवी चौंक पड़ीं, "किसी एक दिन का क्या मतलब ? क्या ये इतने सारे अखबार अब हर रोज़ आएंगे ?"

"हां, तब तक, जब तक जयंती को अपनी मन-पसंद नौकरी नहीं मिल जाती।" राय नौरंगीलाल ने बहुत शांति के साथ कहा और अखबार खोलने लगे।

पति की शांति पर आश्चर्य करते हुए कुछ चिंता के साथ राजेश्वरीदेवी बोलीं, "इसका मतलब यह हुआ कि जयंती की शादी का ज़िक्र दो-तीन साल के लिए और टल गया !"

सुरखियों पर नज़र दौड़ाते हुए राय नौरंगीलाल ने कहा, "लगता तो ऐसा ही है।" उनके कहने से ऐसा लग रहा था जैसे अखबार की कोई खबर पढ़ रहे हों।

राजेश्वरीदेवी उठती हुई बोलीं, "रोज़-रोज़ इन दस-बीस अखबारों को चाटने से जयंती का बेड़ा पार नहीं होगा। मैं तो कब से कहती आ रही हूं, सुबह नहा-धोकर निरने मुंह शिवजी पर जल चढ़ाना शुरू कर दे। घर बैठे वर मिल जाएगा। पर आज की इन पढ़ी-लिखी लड़कियों की तो मत मारी गई है। इन्हें तो सीधी बात उलटी लगती है। तभी तो सूखे पत्ते की तरह इधर से उधर भटकती फिरती हैं।…देख लो, एम० ए० तक पढ़ी हुई हैं लाडो, आज तक ठिकाना नहीं जुट पाया है…"

राय नौरंगीलाल ने अपनी पत्नी की बातों का समर्थन नहीं किया। प्रतिवाद करने की आवश्यकता भी नहीं समझी। उठकर जाती पत्नी को केवल एक नज़र देख मुस्कराते हुए अखबार के पन्ने पलटने लगे।

मुस्कराहट जयंती के चेहरे पर भी थी—हालांकि उस मुस्कराहट का कारण बिलकुल अलग था।

उसने झटके से फिर उस दिन का अखबार उठा लिया और ढूंढ़कर वही विज्ञापन नये सिरे से पढ़ने लगी, जिसे देख उसके चेहरे पर मुस्कराहट और शरीर में अंगड़ाई फूटी थी।

विज्ञापन इस प्रकार था :

"एक धनी, सुशील व शिक्षित व्यक्ति को एक सद्गुणी, सुशीला और सीधी-सादी कन्या की आवश्यकता है। विज्ञापन देनेवाला स्वस्थ, सुंदर और बहुत मिलनसार प्रकृति का है। ज़िंदगी तो उसके अंदर जैसे कूट-कूटकर भरी है, काफी तलाश के बाद भी वह अभी तक अपनी पसंद की लड़की नहीं पा सका है। इसी कारण वह यह विज्ञापन दे रहा है कि शायद किसी ऐसी ही लड़की की नज़र इसपर पड़ जाए। जाति, कुल, वर्ण और दहेज का कोई बंधन नहीं है। सारा पत्र-व्यवहार बिलकुल गुप्त रखा जाएगा। पत्र इस पते पर लिखा जा

सकता है—बॉक्स १५३७, सी० ए० राजधानी टाइम्स, दिल्ली।"

कुछ सोचते हुए जयंती ने अखबार मोड़कर नीचे रख दिया। उसे सपने में भी यह आशा न थी कि इतनी जल्दी ही उसे अपने मन के अनुकूल विज्ञापन मिल जाएगा।

शीघ्रता से उठकर जयंती अपनी ड्रेसिंग-टेवल तक गई। दराज़ खोल उसने नीला, खूबसूरत पैड निकाला, अपना पैन निकाला, उसमें स्याही की जांच की और छोटा स्टूल खींच वहीं आइने के सामने वैठ गई। आइने में उसका प्रतिविम्व चमक रहा था। निकट रखी टाइमपीस सवा नौ वजा रही थी। खुला पैड सामने रख, पैन की कैप के क्लिप को होंठों से सटाए कुछ सोचती मुद्रा में आइने में अपना प्रतिविम्व देख जयंती को सहसा श्री रवि वर्मा के वनाए सुप्रसिद्ध चित्र 'शकुंतला पत्र-लेखन' का ध्यान आ गया। इस तुलना से उसके चेहरे पर मुस्कराहट आ गई; और इस वार तो उसने आइने में देखते हुए सचमुच महसूस किया कि वह मुस्कराते हुए वास्तव में और भी अधिक सुंदर हो उठती है···

मुस्कराती हुई जयंती ने पैड के खुले सफे पर तारीख डाली; लेकिन उसके वाद ही उसे लगा कि तारीखों के अंक टेढ़े और वेडौल हो गए हैं। उसकी मुस्कराहट गायव हो गई। सोचते हुए उसने चर्र से वह सफा फाड़ डाला और उसकी पुड़िया जैसी वना नीचे कालीन पर फेंक दिया। नये सफे पर उसने वहुत एहतियात से दोवारा तारीख डाली और यह देख सुख की एक सांस ली कि इस वार तारीख के अंक वेडौल न वन खासे सुंदर वन गए।

आगे लिखने का विचार करते ही जयंती की हथेलियों में पसीना आने लगा। पैन नीचे रख उसने रूमाल से दोनों हाथों की हथेलियों को अच्छा तरह पोंछा और जैसे कमर कसकर पत्र लिखने के लिए वैठ गई। उस समय उसका दिल वुरी तरह धड़क रहा था। शायद एम० ए० की परीक्षा देते समय भी उसका दिल इस वुरी तरह नहीं धड़का था।

रामा के कई वार आ दरवाज़े के वाहर से खाने के लिए तकाजा कर वापस लौट जाने के भी आध घंटा वाद वह पत्र समाप्त कर उठी।

उस समय टाइमपीस में पौने दो हो रहे थे और उसके पैरों के पास कालीन पर पैड के पच्चीस-तीस नीले कागज़ मुड़ी-तुड़ी पुड़ियाओं की शकल में पड़े जैसे अपने दुर्भाग्य पर आंसू वहा रहे थे।

अगले छः-सात दिन जयंती पर कैसे बीते, यह जयंती ही जानती है, या उसका ईश्वर जानता है, या थोड़ा-बहुत पुष्पा जानती है। पुष्पा इसलिए जानती थी कि एक तो वह जयंती की अंतरंग सखी थी और बचपन से उसके साथ खेली, कूदी, पढ़ी थी। दूसरे, जयंती ने विज्ञापन-दाता महोदय को जो पत्र भेजा था, उसमें अपना पता न देकर पुष्पा का पता दिया था। साथ ही अपना सही नाम जयंती न देकर प्रमिला नाम दिया था। उसी शाम भेंट होने पर उसने ये दोनों बातें पुष्पा को भी बता दी थीं, ताकि प्रमिला के नाम का कोई पत्र आने पर पुष्पा उसे लेने से इनकार न कर दे। अगले ही दिन से वह बेसब्री से अपने पत्र के उत्तर का इंतज़ार करने लगी थी। दिन-भर में, अपने पत्र की पूछताछ करने के लिए, वह पुष्पा को इतने अधिक फोन करने लगी थी कि उससे सहानुभूति होने पर भी पुष्पा का मन उससे छेड़-खानी करने के लिए व्याकुल हो उठता था। ऐसे अवसर पर वह बड़ी कठिनाई से अपनी इस स्वाभाविक दुष्ट इच्छा का दमन करती थी; क्योंकि वह जानती थी कि उसका एक निरीह-सा व्यंग्य-बाण जयंती की आंखों में कई लिटर आंसू एकत्रित कर देगा।

राय नौरंगीलाल सुबह-शाम की चाय और दिन-रात के खाने पर जयंती के इस उड़े-उड़े-से रहने को नोट नहीं करते थे—ऐसी बात नहीं थी। जयंती की इस मनःस्थिति का सही विश्लेषण तो वे नहीं कर पाते थे, लेकिन बैठे-बैठे वे अनुमान अवश्य लगाया करते थे कि

कोई चीज़ ऐसी ज़रूर है जो जयंती को विंधे कांटे की तरह परेशान कर रही है।

रहीं राजेश्वरीदेवी, तो उन्हें इसी बात से फ़ुरसत नहीं मिलती थी कि इस इतवार को आई दो किलोग्राम चीनी, शनिवार शाम तक न चल, वृहस्पतिवार दिन में ही कैसे खतम हो गई ?···या परवल चार आने पाव से एकदम छः आने पाव कैसे हो गए ?···या इकन्नी में आनेवाली साठ तीलियों की माचिस अब नये सात पैसों में क्य, आने लगी है ?···इसके अलावा उन्हें यह जानकर बहुत ही संतोष हुआ था कि जयंती ने अब ढेर सारे अखबार मंगवाने बंद कर दिए हैं। इस खुशी में वे जयंती का अस्तित्व ही भूल गई थीं। ऐसी स्थिति में उस बेचारी के दुःख-सुख से भला उन्हें क्या सरोकार होता !···

पत्र भेजने के सातवें या आठवें दिन की बात है। तीसरे पहर पुष्पा अपना चुटीला अपने दायें हाथ से हिलाती हुई जयंती के कमरे में दाखिल हुई और मुस्कराकर जयंती से बोली, "मिस प्रमिलाकुमारी, अगर मिठाई खिलाओ तो एक नायाब तोहफा दूं आपको !"

उत्सुकता के कारण लेटी जयंती उठकर खड़ी हो गई। कांपता हाथ आगे बढ़ाकर बोली, "कहां है ?"

जयंती का पीला-सा चेहरा देख पुष्पा का उसे तंग करने का मन नहीं हुआ। उसने बिना किसी हिचक के सीधे-सीधे अपने ब्लाउज़ से एक रंगीन पत्र निकाल जयंती के हाथ में दे दिया। जयंती को पीठ मोड़ते हुए देख उसने जयंती का कंधा पकड़ उसे अपनी ओर मोड़ते हुए कहा, "ए लाडो, यह तोताचश्मी ! हम चिट्ठी लाए और साहब हमसे ही पीठ मोड़ी जा रही है।···देखिए जनाब, त्योरियां न चढ़ाइए। इस चिट्ठी की मोहर हमारे सामने ही टूटेगी !"

आश्चर्य से जयंती का मुंह खुल गया, "वाह ! यह कैसे हो सकता है ?" उसने पुष्पा से कहा, "यह तो मेरा प्राइवेट लैटर है !"

"तो क्या हुआ ?" पुष्पा ने बड़े सरल भाव से कहा, "अभी तो मेरे प्राइवेट लैटर आने ही शुरू नहीं हुए हैं। जब मेरे लैटर आने लगेंगे तो तुम भी उन्हें मेरे साथ ही बैठकर पढ़ा करना !"

पुष्पा के इस सरल किंतु दिलचस्प तर्क पर जयंती को हंसी आ गई। सिर हिलाती हुई वह बोली, "अच्छा, इस शर्त पर मंज़ूर है ! लो, चिट्ठी तुम्हीं खोलो।" और उसने लिफाफा पुष्पा के आगे बढ़ा दिया।

पुष्पा ने लिफाफा रोशनी की ओर कर उसमें मुड़ी चिट्ठी की स्थिति देखी और तब बड़े एहतियात से उसका सिरा फाड़कर चिट्ठी बाहर निकाली।

दोनों सखियां मुस्कराती हुई पलंग पर बैठ गईं।

पुष्पा ने चिट्ठी का सिरा देखकर कहा, "चिट्ठी देहरादून से आई है···ठीक है···तभी जवाब आने में एक हफ्ता लग गया···लोकल मामला होता तो यह चिट्ठी कभी की आ चुकी होती और अब तक शायद उसका जवाब भी चला गया होता···खैर, देहरादून भी जगह बुरी नहीं है; लेकिन वहां मच्छर और खटमल बहुत होते हैं···वैसे वहां की चाय, चूना और चावल बहुत मशहूर हैं···"

उसे बीच में ही रोकते हुए जयंती ने कहा, "चिट्ठी तो पढ़ चुड़ैल। बिना चिट्ठी पढ़े ही टीका करने बैठ गई ! ···तुझसे यह देहरादून का भूगोल कौन पूछ रहा है ?"

पुष्पा मुस्कराती हुई बोली, "लाडो, मैं तो अपने सामान्य ज्ञान का परिचय दे रही थी। इस चाव में मैं यह भूल गई कि तुझे इस समय मेरे इस ज्ञान की नहीं, पत्र में लिखे ज्ञान की जानकारी की उत्कंठा है।···मन में शांति रख तरुणी ! मैं शीघ्र ही तेरी इच्छा पूर्ण करती हूं···हां, लिखा है इस नीली चिट्ठीवाले भाई ने—" और आगे पढ़ने से पहले रुककर उसने मुस्कराती हुई जयंती को देखा। उसका आशय था—इजाज़त है ?···

जयंती के सिर हिलाकर सिगनल देते ही पुष्पा ने गला खखार पत्र पढ़ना आरम्भ किया, "प्रिय महोदया, विश्वास मानिए, आपका उत्तर पाकर मुझे सचमुच ही बहुत आश्चर्य हुआ है। मुझे सपने में भी—(और मैं यह स्पष्ट कर दूं कि मुझे सपने बहुत ही कम आते हैं)—इस बात की आशा न थी कि इतनी सुशिक्षिता और सुलझी हुई कोई युवती, जिसकी योग्यता उसके सुन्दर और सुरुचिपूर्ण पत्र से

पूछने का साहस किसीने भी नहीं किया था। कई बार राय नौरंगीलाल सोचते कि चलकर जयंती से बातों ही बातों में उसके मन की टोह लें; लेकिन कुछ देर बाद उनके अन्दर का उपन्यास-पाठक उन्हें समझाता—'मियां, इस कहानी का जो भी रहस्य है, वह अन्त में एक न एक दिन तो खुलेगा ही! यदि तीसरे ही अध्याय में रहस्य खुल गया तो उपन्यास पढ़ने का मज़ा क्या रहेगा?'···इस कारण अंत में ही मज़ा लेने के लालच से वे अपने-आपको जयंती से इस सम्बन्ध में बातें करने से रोक लेते···बस, ध्यानपूर्वक यह अवश्य नोट करते जाते कि आज जयंती कमरे में आध घंटा गुनगुनाती रही···आज उसने एक घंटे के अन्दर तीन बार कपड़े बदले और तीनों ही बार उसे असंतोष रहा कि कपड़े ठीक नहीं हैं···आज वह बाल्कनी में एक मोटी-सी किताब लेकर पढ़ने बैठी थी, जिसमें न उसका ध्यान था, न उसकी दृष्टि; क्योंकि कुछ देर बाद वह किताब उसकी गोद से नीचे फर्श पर गिरी हुई थी और वह एकटक आकाश की ओर ही देख रही थी, जैसे आकाश से परे जो कुछ भी है, वह उसे साफ-साफ दीख रहा है।···

आए दिन एकाध घटना इस किस्म की हो जाती···कभी जयंती को अपनी चाबियां नहीं मिलतीं···तो कभी उसका पेन ही सामने रखा-रखा अदृश्य हो जाता···तो कभी उसका पर्स ही गायब हो जाता···जयंती खूब झल्लाती और सारा घर सिर पर उठा लेती, गो इन सब चीज़ों का कोई असर नहीं होता; क्योंकि थोड़ी देर में ही उसे ध्यान आ जाता कि फलानी चीज़ तो वह फलानी जगह छोड़ आई थी···और फलानी चीज तो उसने फलानी जगह से उठाई ही नहीं···वह उस जगह जाती और देखती कि जिस चीज़ को वह इतनी देर से ढूंढ़ रही है, वह अनछुई, वैसी की वैसी उसी जगह रखी हुई है···तब अपनी बेध्यानी और इस बढ़ते भुलक्कड़पन पर वह मन ही मन थोड़ा-बहुत लज्जित भी होती और यह भी सोचती कि घर-वाले ये सब देख क्या सोचते होंगे?···

घरवाले तो जो कुछ सोच सकते थे, सोचते ही थे; लेकिन पुष्पा थी कि अपनी सहेली के इन लक्षणों को देखती और हंसते-हंसते

लोट-पोट हो जाती। इधर उसका आना बढ़ गया था—स्वाभाविक भी था—सुशील और जयंती का पत्र-व्यवहार भी तो बहुत अधिक बढ़ गया था।

एक दिन हमेशा की तरह जयंता सुशील का पत्र पढ़कर मुस्कराने की जगह गहरे सोच में डूब गई। लॉलीपॉप चूसती हुई पुष्पा ने पहले तो सोच में बैठी जयंती की ओर ध्यान नहीं दिया। अचानक करवट बदलने पर उसने जयंती की ओर देखा और चमककर उठ बैठी। लॉलीपॉप मुंह से निकालते हुए उसने प्रश्न किया, "क्यों री, खैरियत तो है?…तू इस तरह क्यों बैठ गई, जैसे संसार को चलाने की ज़िम्मेदारी तुझपर ही आन पड़ी है?"

एक फीकी-सी मुस्कराहट जयंती के चेहरे पर आ गई। तब धीरे से बोली, "एक छोटी-सी उलझन आ खड़ी हुई है।"

"क्या उलझन है?" पुष्पा ने पूछा।

"मिस्टर सुशील ने पत्र में लिखा है कि मैं उनके पास अपना एक फोटो भेज दूं। वे देखकर वापस कर देंगे!" जयंती ने पत्र पर अपनी दृष्टि जमाए हुए बतलाया।

"तो इसमें क्या उलझन है?" पुष्पा ने बहुत सरल भाव से प्रश्न किया।

"मैं इस तरह एक अपरिचित को अपना फोटो नहीं भेज सकती। क्या पता, वे मेरे फोटो से कोई अनुचित लाभ ही उठाएं!" जयंती ने बहुत गम्भीरता के साथ कहा।

"ठीक है। तो तुम पत्र के उत्तर में लिख दो—पहले आप अपना फोटो भेजिए। इस बीच मैं अपना फोटो खिंचवा लूंगी, तब भेज दूंगी। क्यों, यह ठीक रहेगा न?…अगर मिस्टर सुशील का फोटो इस लायक हुआ कि उन्हें तुम अपनी फोटो भेज सको, तो भेज देना, वरना तब की तब सोची जाएगी। मैं तब तुम्हें और कोई बढ़िया-सी सलाह दे सकूंगी—सोचने का टाइम भी मिल जाएगा न!" पुष्पा ने मुस्कराकर कहा।

जयंती भी मुस्कराने लगी। उसे पुष्पा का सुझाव पसंद आया था। वह बैठकर उसी समय मिस्टर सुशील के पत्र का उत्तर लिख

पूछने का साहस किसीने भी नहीं किया था। कई बार राय नौरंगीलाल सोचते कि चलकर जयंती से बातों ही बातों में उसके मन की टोह लें; लेकिन कुछ देर बाद उनके अन्दर का उपन्यास-पाठक उन्हें समझाता—'मियां, इस कहानी का जो भी रहस्य है, वह अन्त में एक न एक दिन तो खुलेगा ही! यदि तीसरे ही अध्याय में रहस्य खुल गया तो उपन्यास पढ़ने का मज़ा क्या रहेगा?'...इस कारण अंत में ही मज़ा लेने के लालच से वे अपने-आपको जयंती से इस सम्बन्ध में बातें करने से रोक लेते...बस, ध्यानपूर्वक यह अवश्य नोट करते जाते कि आज जयंती कमरे में आध घंटा गुनगुनाती रही...आज उसने एक घंटे के अन्दर तीन बार कपड़े बदले और तीनों ही बार उसे असंतोष रहा कि कपड़े ठीक नहीं हैं...आज वह बाल्कनी में एक मोटी-सी किताब लेकर पढ़ने बैठी थी, जिसमें न उसका ध्यान था, न उसकी दृष्टि; क्योंकि कुछ देर बाद वह किताब उसकी गोद से नीचे फर्श पर गिरी हुई थी और वह एकटक आकाश की ओर ही देख रही थी, जैसे आकाश से परे जो कुछ भी है, वह उसे साफ-साफ दीख रहा है।...

आए दिन एकाध घटना इस किस्म की हो जाती...कभी जयंती को अपनी चाबियां नहीं मिलतीं...तो कभी उसका पेन ही सामने रखा-रखा अदृश्य हो जाता...तो कभी उसका पर्स ही गायब हो जाता...जयंती खूब झल्लाती और सारा घर सिर पर उठा लेती, गो इन सब चीज़ों का कोई असर नहीं होता; क्योंकि थोड़ी देर में ही उसे ध्यान आ जाता कि फलानी चीज़ तो वह फलानी जगह छोड़ आई थी...और फलानी चीज़ तो उसने फलानी जगह से उठाई ही नहीं...वह उस जगह जाती और देखती कि जिस चीज़ को वह इतनी देर से ढूंढ़ रही है, वह अनछुई, वैसी की वैसी उसी जगह रखी हुई है...तब अपनी बेध्यानी और इस बढ़ते भुलक्कड़पन पर वह मन ही मन थोड़ा-बहुत लज्जित भी होती और यह भी सोचती कि घर-वाले ये सब देख क्या सोचते होंगे?...

घरवाले तो जो कुछ सोच सकते थे, सोचते ही थे; लेकिन पुष्पा थी कि अपनी सहेली के इन लक्षणों को देखती और हंसते-हंसते

लोट-पोट हो जाती। इधर उसका आना वढ़ गया था—स्वाभाविक भी था—सुशील और जयंती का पत्र-व्यवहार भी तो वहुत अधिक वढ़ गया था।

एक दिन हमेशा की तरह जयंता सुशील का पत्र पढ़कर मुस्कराने की जगह गहरे सोच में डूव गई। लॉलीपॉप चूसती हुई पुष्पा ने पहले तो सोच में वैठी जयंती की ओर ध्यान नहीं दिया। अचानक करवट वदलने पर उसने जयंती की ओर देखा और चमककर उठ वैठी। लॉलीपॉप मुंह से निकालते हुए उसने प्रश्न किया, "क्यों री, खैरियत तो है?···तू इस तरह क्यों वैठ गई, जैसे संसार को चलाने की ज़िम्मेदारी तुझपर ही आन पड़ी है?"

एक फीकी-सी मुस्कराहट जयंती के चेहरे पर आ गई। तव धीरे से वोली, "एक छोटी-सी उलझन आ खड़ी हुई है।"

"क्या उलझन है?" पुष्पा ने पूछा।

"मिस्टर सुशील ने पत्र में लिखा है कि मैं उनके पास अपना एक फोटो भेज दूं। वे देखकर वापस कर देंगे!" जयंती ने पत्र पर अपनी दृष्टि जमाए हुए वतलाया।

"तो इसमें क्या उलझन है?" पुष्पा ने वहुत सरल भाव से प्रश्न किया।

"मैं इस तरह एक अपरिचित को अपना फोटो नहीं भेज सकती। क्या पता, वे मेरे फोटो से कोई अनुचित लाभ ही उठाएं!" जयंती ने वहुत गम्भीरता के साथ कहा।

"ठीक है। तो तुम पत्र के उत्तर में लिख दो—पहले आप अपना फोटो भेजिए। इस वीच मैं अपना फोटो खिंचवा लूंगी, तव भेज दूंगी। क्यों, यह ठीक रहेगा न?···अगर मिस्टर सुशील का फोटो इस लायक हुआ कि उन्हें तुम अपनी फोटो भेज सको, तो भेज देना, वरना तव की तव सोची जाएगी। मैं तव तुम्हें और कोई तरीका-सी सलाह दे सकूंगी—सोचने का टाइम भी मिल जाएगा न!" पुष्पा ने मुस्कराकर कहा।

जयंती भी मुस्कराने लगी। उसे पुष्पा का सुझाव पसंद आया था। वह वैठकर उसी समय मिस्टर सुशील के पत्र का उत्तर लिखने

गला खखारकर निगम साहब ने अपने स्वर में बड़ी मुलायमियत भरते हुए कहा, "मुझे सब बिलों की याद है मिस्टर नारायन!... रियली, आई एम वेरी सॉरी कि पेमेंट में इतनी डिले (देर) हो गई है... अब जब आपने इतने दिन इंतज़ार किया है तो एक हफ्ता और इंतज़ार कर लीजिए..." फिर स्वर और धीमा कर मुस्कराते हुए इस तरह बोले, जैसे किसी बहुत बड़े रहस्य का उद्घाटन कर रहे हों, " बात यह है कि अगले हफ्ते मेरी सगाई हो रही है। लड़कीवाली पार्टी बहुत सॉलिड है—मुझे ज़िन्दगी-भर किसी चीज़ की कमी नहीं रहेगी... आपके सारे बिल्स का पेमेंट मैं एक ही चैक से कर दूंगा... अच्छा, अब मैं चलूंगा... आप फिक्र न करें मिस्टर नारायन, मैं आपको सगाई का इन्विटेशन (निमंत्रण) भेजूंगा..." और निगम साहब मुस्कराते हुए, खासे आत्मविश्वास के साथ सीढ़ियों की ओर बढ़ गए।

सीढ़ियां उतरते हुए उनके कान। में मिस्टर नारायन का दबा हुआ स्वर पड़ा, "आप इन्विटेशन भेजें चाहे न भेजें मिस्टर निगम, लेकिन चैक ज़रूर भेज दीजिएगा।"

निगम साहब, नारायन की दूकान की परिधि के बाहर निकल सड़क पर पहुंचे कि उनकी अकड़ फिर उनके शरीर में वापस पहुंच गई। अचानक ही जैसे सूट की प्रेस ठीक होने लगी और फिर ऐसा प्रतीत होने लगा कि उनके शरीर पर गूदड़ी बाज़ार से खरीदा हुआ नहीं, कनॉट प्लेस के किसी महंगे टेलर का बड़े करीने से सिला हुआ सूट सुशोभित है।

तीसरे या चौथे दिन पुष्पा जयंती के पास आई तो जैसे उसका अंग-अंग थिरक रहा था। उसी तरह उछलते-मुस्कराते उसने झुककर जयंती के कान में फुसफुसाकर कोई बात कही। सुनकर आश्चर्य से जयंती की आंखें और गोल हो गई। फिर उसने पुष्पा को अपने निकट बुला उसके गले में बांहें डाल उसके कान में कुछ कहा। सुनकर पुष्पा को बड़ी ज़ोर की हंसी आई जिसे रोकने के लिए उसे अपनी उंगली अपने दांतों के नीचे देनी पड़ी। इस क्रिया में अभाग्यवश

उंगली कुछ ज़्यादा ही कट गई। उंगली पर फूंक मारते हुए पुष्पा ने फिर जयंती के कान में कुछ कहा, जिसे सुनते ही जयंती फुरती से उठ खड़ी हुई। एक नज़र उसने अपने वस्त्रों पर डाली और आंखों ही आंखों में पुष्पा से प्रश्न किया, 'ठीक हैं न ?' उंगली पर फूंक मारती पुष्पा के सिर हिलाने पर उसने ज़रा ऊंचे स्वर में कोने में आसन पर बैठी 'गाथा' पढ़ती चाचीजी को सम्बोधित करते हुए कहा, "चाचीजी, मैं एक किताब लेने पुष्पा के साथ पुष्पा के घर जा रही हूं। घंटे-एक में लौट आऊंगी ! चाचाजी पूछें तो बतला दीजिएगा !" और चाची की 'हां-ना' सुने बिना, उंगली चूसती पुष्पा का हाथ पकड़ उसे अपने साथ घसीटती हुई बाहर ले भागी।

चाचीजी दीवार की ओर मुंह किए बैठी 'गाथा' पढ़ अवश्य रही थीं, लेकिन उनका मन 'गाथा' में न होकर इन दोनों 'सींगकटी बछड़ियों' की दबी हुई खुसुर-पुसुर और इनकी मद्धिम खिलखिलाहट की ओर था। इन लोगों की मंत्रणा न सुन सकने की असफलता से क्षुब्ध हो उनका ध्यान 'गाथा' की ओर चला गया था और वे सोचने लगी थीं कि 'रामचरितमानस' में बाबा तुलसीदास ने कितना सच लिखा है—'जहां यज्ञ होते हैं, वहां राक्षस आ ही जाते हैं।'...आज बाबा होते तो वे बनारस जाकर इतना संशोधन अवश्य करवातीं कि राक्षस ही नहीं, राक्षसियां भी आ धमकती हैं।...लेकिन दोनों 'राक्षसियों' के इतनी शीघ्रता और इतनी आसानी से चले जाने के कारण उनके 'गाथा-यज्ञ' के विघ्न समाप्त हो गए और संशोधन करवानेवाली बात उनके दिमाग से एकदम निकल गई। दोबारा गाथा की ओर ध्यान आकर्षित करने पर भी उनके मन में यही बात घूमती रही—आखिर ये लड़कियां बात क्या कर रही थीं ?...इतनी धूप में ये गईं कहां ?...

और बात भला क्या थी ?...सिर्फ इतनी कि मिस प्रमिला-कुमारी यानी जयंती के नाम आज एक रजिस्टर्ड लिफाफा आया था जिसपर देहरादून की मुहर थी। रजिस्टर्ड होने के कारण पोस्टमैन ने पुष्पा को कह दिया था कि मैं दो बजे तक फिर आऊंगा, आप प्रमिलाकुमारी को यहीं बुलवा लीजिए। पुष्पा से यह सूचना पाकर जयंती के लिए अपने घर पर बैठी रहना असह्य हो गया था और वह

एक वजे ही पुष्पा के साथ घर से निकल पड़ी थी।

पोस्टमैन दो से पहले ही आ गया। शायद यही कारण था कि जयंती प्रतीक्षा करते हुए मूर्छित नहीं हो गई थी, वरन खासी चैतन्य थी। पोस्टमैन को एक रुपया पुरस्कार दे उसे शीघ्र विदा कर दोनों लड़कियों ने धड़कते दिल और कांपते हाथों से लिफाफा खोला और उसमें से निकले चित्र को देख खोई-सी खड़ी रह गईं···

काफी देर तक चित्र को टकटकी लगाए देखते रहने के वाद दोनों सहेलियों ने दृष्टि ऊपर कर एक-दूसरी को देखा और फिर चित्र देखने में व्यस्त हो गईं—इस वार एंगल वदल गए थे—यानी पुष्पा जयंतीवाली जगह से चित्र का जायज़ा ले रही थी और जयंती पुष्पावाली जगह से। तीस या वत्तीस वर्ष के उस धीर-गम्भीर युवक के सौम्य चेहरे पर एक प्रकार के वड़प्पन का भाव परिलक्षित होता था और वहुत सुंदर न होने पर भी चित्रवाला युवक असुन्दर नहीं लगता था।

सराहना के भाव से देखते हुए पुष्पा ने जयंती से कहा, "भई, फोटो तो इम्प्रसिव है! अगर ये सचमुच में ही ऐसे हुए तो सच मान जयंती, तेरे तो जन्म-जन्मांतरों तक के लिए भाग्य खुल जाएंगे।"

जयंती की दृष्टि अव भी चित्र पर ही जमी हुई थी। पुष्पा के चेहरे पर हलकी-सी मुस्कराहट आ गई। गला खखारते हुए उसने फिर कहा, "मैडम, वहुत हो गया। इस तरह विना पलक झपके चित्र को तकती ही रहोगी तो जिसका चित्र है उसे देहरादून में छींकें और हिचकियां आने लगेंगी। उस गरीव पर रहम करो···और ज़रा चित्र और लिफाफे को उलट-पुलटकर देख लो, भाई ने कोई चिट्ठी-विट्ठी भी साथ रख छोड़ी है या नहीं!···"

अव जयंती को ध्यान आया कि चित्र के नशे में वह पत्र की वात तो भूल ही गई। उसने मेज़ पर पड़े लिफाफे को उठाया। उसमें एक छोटी-सी चिट मौजूद थी।

विना किसी सम्वोधन के वह पत्र इस प्रकार था—"इतने अरसे वाद, मुझे तुम्हारी जैसी लड़की, जिसके मैं सदा सपने देखा करता

था, आखिर मिल ही गई है।…मुझे तुम्हारे पत्र, तुम्हारे विचार, तुम्हारे शब्द—यानी कि तुम्हारी हरेक बात बहुत ही ज़्यादा पसन्द आई है। मेरा मन अपनी मूक वाणी में मुझसे कहता है कि मैं तुम्हें ही पत्नी के रूप में पाकर सुखी हो सकता हूं। मेरे पास काफी पैसा है—जितनी ज़रूरत हो सकती है, उससे थोड़ा ज़्यादा—इसलिए मेरा और कोई उद्देश्य न समझना। मैं तो यह तक नहीं जानना चाहता कि तुम अमीर हो या गरीब। तुम कांग्रेस की अनुयायी हो या साम्यवादी विचारों की समर्थक। तुम कुछ भी हो, कोई भी हो, कैसी भी हो, मुझे पसन्द हो। अगर तुम्हें मेरी यह शकल पसन्द आ जाए और तुम इस शकल के आदमी को अपना पति बनाना गवारा कर सको तो कृपया शीघ्र ही अपना फोटो भेज दो। अगर तुम्हारे फोटो ने भी मुझपर ऐसा ही इम्प्रेशन डाला, जैसा तुम्हारे पत्रों ने डाला है, तो मैं चाहूंगा कि शीघ्र ही दिल्ली या देहरादून—जहां तुम उचित समझो—हमारी और तुम्हारी एक भेंट हो जाए जिसमें हम लोग अपने विवाह की डिटेल्स निश्चित कर सकें…इसी आशावादी भावना के साथ मैं अपना यह संक्षिप्त पत्र समाप्त कर रहा हूं… सविनय, सुशील !"

इतना लम्बा 'संक्षिप्त पत्र' समाप्त कर पुष्पा ने जयंती की ओर देखा तो पाया कि उसकी आंखें बन्द हैं और वह इस तरह झूम रही है कि अगर रोका न जाए तो शायद नीचे ही गिर पड़े। स्वर ऊंचा कर उसने ज़ोर से कहा, "ए मैडम, यह झूमना बन्द करो…अगर तुम सचमुच ही सीरियस हो, तो जल्दी ही अपना एक बढ़िया-सा फोटो इन साहब के पास आज ही भेज दो। मछली ने चुग्गा पकड़ लिया है और अब वह 'हुक' में फंसने की प्रतीक्षा कर रही है। तुम आज ही रजिस्ट्री से वह 'हुक' मछली के पास भिजवा दो…ताकि जो कुछ होता है जल्दी हो जाए…तुम लोगों का घर बस जाए तो मुझे छुट्टी मिल जाए…मैं भी खासी हलकान हो चुकी हूं और अब चाहती हूं कि तेरी पोस्टमैनी को प्रणाम कर अपने धंधे में लगूं…"

जयंती मुस्कराती हुई अपनी जगह से उठी और बड़े प्यार से पुष्पा के गले में अपनी दोनों बांहें डालती हुई बोली, "सच पुष्पा, मैं

तेरी बड़ी आभारी हूं। तेरे ही कारण इस सम्बन्ध के स्थापित हो सकने की नौवत आई है। तेरे ऋण से तो मैं जीवन-भर उऋण नहीं हो सकूंगी!"

"जीवन-भर?" पुष्पा ने चौंककर कहा, "अरी अज्ञानी, जन्म-जन्मांतर कह, जन्म-जन्मांतर! तू और तेरे मिस्टर सुशील अगले कई जन्मों तक मेरे ऋण से उऋण नहीं हो सकेंगे!" और वह मुक्त भाव से हंसने लगी।

इस घटना के चौथे दिन, ठीक उसी समय, उसी तरह पुष्पा जयंती को सुशील साहब का नया और तरो-ताज़ा पत्र पढ़कर सुना रही थी। अंतर केवल इतना ही था कि पत्र पुष्पा के घर में नहीं, जयंती के कमरे में पढ़ा जा रहा था। जयंती के अपना चित्र भेज देने पर और उसे देख अत्यधिक प्रमुदित होने पर सुशील साहब ने अपनी मनोभावनाएं इन शब्दों में प्रकट की थीं—"मैं जैसा स्वप्न देखता था तुम बिलकुल वैसी ही निकलीं। तुम्हारे चित्र को देख मुझे कुछ ऐसा लग रहा है कि मैं तुम्हें जैसे मुद्दत से जानता-पहचानता हूं। यदि तुम मुझसे विवाह करने की स्वीकृति दे दोगी तो सचमुच ही मेरे भाग्य जग जाएंगे···लिखो कि तुम्हारा निर्णय क्या है।···मैं व्यर्थ के पत्राचार में समय नष्ट किए बिना शीघ्र ही तुमसे मिलना चाहता हूं। बहुत-सी बातें हैं जा सामने बैठकर ही तय की जा सकती हैं। ···कृपया शीघ्र उत्तर दो कि तुम कब आ रही हो।···मैं प्रतीक्षा करूंगा···अपने पत्र में अपने आने की तारीख अवश्य लिखना, ताकि मैं तुम्हारे ठहरने की व्यवस्था कर सकूं···"

पत्र समाप्त कर पुष्पा ने जयंती की ओर देखा। उसका ख्याल

के वह आंखें बन्द किए झूम रही होगी, परन्तु जयंती गम्भीर हो
थी। पुष्पा ने किंचित् आश्चर्य के साथ पूछा, "क्यों, क्या हो
? फिर कोई नई उलझन आ खड़ी हुई ?"
जयंती ने एक लम्बी सांस लेकर कहा, "पता नहीं, मेरे भाग्य में
बदा है।...अब तक तो मैं महज़ कौतुकवश यह सब खिलवाड़
रही थी, लेकिन अब जब स्थिति खासी गम्भीर हो रही है, मुझे
राहट होनी आरम्भ हो गई है...मुझे लगता है जैसे अपने रचे
यंत्र में मैं खुद ही फंस गई हूं। इस मछली-जाल से अब मेरा
कारा असम्भव है !"

पुष्पा ने भी थोड़ा गम्भीर होकर कहा, "देख जयंती, अगर तू
ानी शादी अपने-आप करने की इस योजना को मछली-जाल में
ाना समझती है तो यह न भूल कि इस जाल में फंसनेवाली तू अकेली
नहीं है। तेरे साथ एक दूसरी मछली—मछली क्यों, उस भाई को
मच्छ कहना चाहिए—भी मौजूद है। तुम दोनों ही विधाता
रा रचे इस षड्यंत्र के शिकार हो। घबराहट की तो कोई बात ही
हीं है। तुम पढ़ी-लिखी समझदार लड़की हो। तुम लॉलीपॉप तो
नहीं जो तुम्हें कोई खा जाएगा। जिस साहस से तुमने अब तक
ाम लिया है, आगे भी उसी साहस से काम लो। सुशील साहब से
ालकर सब बातें तय कर लो और इस विश्वास के साथ कि तुम्हारा
या जीवन बहुत सुखी होगा, हम लोगों से विदा लेकर अपना नया
ीवन आरम्भ करो...मेरी शुभ कामनाएं तुम्हारे साथ हैं और मेरा
विश्वास है कि पता चलने पर चाचीजी की भी शुभ कामनाएं तुम्हारे
ाथ होंगी...हां, निगम साहब की शुभ कामनाएं तुम्हें नहीं मिल
सकेंगी, क्योंकि उनकी हालत उस समय खराब रहेगी!" और निगम
साहब की याद से पुष्पा को हंसी आ गई।

पुष्पा की बातों से जयंती की क्षणिक गम्भीरता के बादल छंट
गए। उसे भी लगा कि घबराहट या किसी प्रकार के डर की तो कोई
बात ही नहीं है। कुछ विचार करती हुई वह बोली, "तो तुम्हारी राय है
कि मुझे मिस्टर मृणाल को अपने विवाह की स्वीकृति दे देनी चाहिए।"

"फौरन !...आज...बल्कि अभी ही," पुष्पा ने स्पष्ट स्वर में

अपनी बात कही, "बल्कि मैं तो राय भी यही दूंगी कि तुम विवाह भी शीघ्र ही कर लो। ऐसा करने से तुम्हारा रुपया-पैसा भी चाचाजी के पास से निकलकर तुम्हें मिल जाएगा और इस दिल्ली से तुम्हारा पिंड छूट जाएगा।"

जयंती फिर सोच में पड़ गई, "लेकिन पुष्पा, विवाह इतने शीघ्र कैसे हो सकता है ? इधर तो लगन ही नहीं हैं। दिसम्बर से पहले तो विवाह किसी भी तरह सम्भव नहीं हो सकता।"

पुष्पा जयंती के चेहरे को अच्छी तरह देखती हुई बोली, "तो बहिन, लगन का इन्तज़ार करोगी तो इतने अच्छे पत्र लिखनेवाले विनयी पति से भी हाथ धोओगी और रुपये-पैसे से भी। शादी-व्याह के सम्बन्ध में पुरुषों की बात का अधिक देर तक विश्वास करना समझदारी नहीं है। यह भी तो सम्भव है कि वे अपना इरादा ही बदल दें। अभी वह भला आदमी तेरे पत्र और तेरे चित्र की मार्फत तुझपर रीझा हुआ है, तेरा परम धर्म है कि तू इसीको लगन समझ और इसी सुघड़ी में उससे अपना विवाह रचा ले। मान ले, दिसम्बर तक सुशील साहब को देहरादून, मसूरी, चकराता में ही कोई दूसरी लड़की पसन्द आ गई, तब क्या होगा साहब ?···तब आप क्या कीजिएगा ?···इसलिए जयंती, पुरातन-पंथी न बनो, समझदारी से काम लो और लगन-वगन का चक्कर छोड़, कोर्ट-मैरिज कर डालो। बाद में उसे ठाठ के साथ सेलिबरेट कर लेना···लेकिन जो भी करना है, जल्दी करो···" फिर जयंती के चेहरे पर एक दृष्टि डालते हुए उसने बात समाप्त की, "मुझे जो कुछ कहना था, कह दिया। आगे तेरी मरज़ी !"

जयंती की समझ में पुष्पा की बात आसानी से आ गई। उसने निश्चय किया कि वह शीघ्र ही, एक-दो दिन के अन्दर ही, देहरादून जाएगी और सुशील से सब आवश्यक बातें तय कर लेगी···और यदि सम्भव हो सका—यानी सुशील भी राज़ी हो गया—तो वहीं उससे कोर्ट-मैरिज कर लेगी।

पुष्पा को विदा कर वह सुशील को यह सूचना देने के लिए उसी समय पत्र लिखने के लिए बैठ गई।

पत्र लिख और उसे डाक में डलवाने के बाद जयंती ने अपने को खासा स्वस्थ महसूस किया। दिन में जिस दुर्बलता और घबराहट ने उसे घेर लिया था, वह उस समय उससे दूर भाग गई थी।

कुछ सोचती हुई वह राय नौरंगीलाल के कमरे में आ गई। इतवार को अखबार का मैगज़ीन सेक्शन पूरी तरह न पढ़ सकने के कारण, राय नौरंगीलाल उस समय बहुत तल्लीनता के साथ अखबार का रविवारीय परिशिष्ट पढ़ रहे थे। जयंती को विचारों में डूबी अपने कमरे में आता देख उनके अन्दर का उपन्यास-पाठक जाग गया और उन्हें दो बातों का ख्याल आया कि या तो जयंती बेध्यानी में भूल से उनके कमरे के अन्दर आ गई है या फिर अब उपन्यास की कहानी छठे अध्याय तक आ पहुंची है, तभी तो नायिका अब तक छिपाए गए अपने रहस्य को अपने साथ लेकर अपने चाचा से किसी ज़रूरी और गोपनीय मसले पर राय लेने उनके पास आ पहुंची है। शीघ्र ही उनके दूसरे कयास की पुष्टि हो गई, क्योंकि उनसे दृष्टि मिलते ही जयंती ने उनसे कहा, "चाचाजी, आपके पास थोड़ा टाइम होगा न ?... मैं आपसे कुछ ज़रूरी बात करने आई हूं।"

"मेरे पास टाइम ही टाइम है।" चाचाजी ने अखबार मोड़कर एक तरफ रखते हुए कहा, "तुम बैठ जाओ और इतमीनान से कहो, तुम्हें क्या कहना है ?"

जयंती ने निकट पड़ा मूढ़ा खींच लिया और उसपर बैठ गई। एक-दो क्षण चुप रह वह बोली, "चाचाजी, बात खासी लम्बी है और मैं समझ नहीं पा रही हूं कि कहां से शुरू करूं ; इसलिए मैं बहुत संक्षेप में ही बात कहूंगी...आप मेरी बातें सुनकर चौंकिएगा मत... मैंने अपना विवाह लगभग निश्चित कर लिया है...परसों मैं उन साहब से मिलने देहरादून जा रही हूं और अगर सम्भव हो सका तो मैं वहीं विवाह कर लूंगी और तब उनके साथ ही दिल्ली लौटूंगी। आशा है, आपको मेरे इस निर्णय पर कोई आपत्ति नहीं होगी ; क्योंकि आप चाहते ही थे कि अपनी छोटी बहिनों की तरह मैं भी विवाह कर लूं... विवाह के बाद तो आशा है कि आप मुझे मेरे हिस्से का रुपया दे देंगे और साथ ही मुझे दिल्ली से बाहर जाकर रहने की आज़ादी

"दुनिया जो भी कहना चाहे, कहे—मुझे उसकी कोई परवाह नहीं है···और जो तुम्हारा दूसरा सवाल है कि यह क्या हो रहा है, उसके सम्बन्ध में मुझे सिर्फ यही कहना है कि हमारे यहां अब तक ऐसा हुआ तो नहीं है ; मगर अब जब यह हो रहा है तो मुझे इसमें कोई ऐतराज़ भी नहीं है—मैं समय के साथ-साथ चलना चाहता हूं।" राय नौरंगीलाल ने इतना कहने के बाद अब पहली बार अपनी पत्नी की ओर दृष्टि उठाकर देखा।

राजेश्वरीदेवी ने कुछ आश्चर्य के साथ प्रश्न किया, "तुम्हें जयंती के इस तरह शादी करने में कोई ऐतराज़ नहीं है ?···तुम इस तरह की हुई शादी को मान लोगे और उसे उसके हिस्से का रुपया-पैसा दे दोगे ?···"

"हां," राय नौरंगीलाल ने दृढ़ता के साथ कहा, "अब ऐसा ही करना ठीक होगा। अब तक तो जयंती शादी के ज़िक्र से ही भड़कती थी ; अब जब वह शादी के लिए तैयार हो गई है—चाहे अपनी मर्ज़ी की शादी ही सही—मैं इस शादी में रोड़ा अटका, बनती बात नहीं बिगाड़ना चाहता। न ही चाहता हूं कि आखिरी दिनों में जयंती की नज़रों में बुरा बनूं···अगर अब मैं उसे रोकूंगा तो मेरी सारी नेकनीयती पर पानी फिर जाएगा···शायद तब जयंती यही समझे कि मैं उसे उसके हिस्से का पैसा नहीं देना चाहता···और फिर हम लाख इधर-उधर की बातें करें, सचाई यह है कि जयंती समझदार और भली लड़की है। हमें उसका विश्वास करना ही होगा···जो वह ठीक समझकर करती है, हमें उसे स्वीकार करना ही होगा।"

दरवाज़े की आड़ में छिपकर खड़े रामा ने ये सब बातें सुन, सिर हिलाते हुए मन ही मन कहा, 'बड़े बाबूजी मांजी से कहीं ज़्यादा समझदार हैं···'

जयंती अपना सूटकेस लगा ही रही थी कि उसकी दोनों छोटी और विवाहित बहिनों—लल्ली और छोटी—ने संयुक्त रूप से उस-पर धावा बोला। जयंती के जाने की सूचना प्राप्त होते ही लल्ली अपने बच्चोंसहित तैयार हो गई और टैक्सी मंगवा जयंती से मिलने

के लिए चल पड़ी। रास्ते में कुछ ध्यान आने पर उसने टैक्सी छोटी के घर की ओर मुड़वा दी। छोटी को भी सूचना मिल गई थी और वह भी जयंती से मिलने के लिए तैयार हो रही थी। अपनी गोद की बच्ची को ले वह भी उसी टैक्सी में बैठकर जयंती के पास आ गई।

अपनी दोनों बहिनों को देख जयंती को प्रसन्नता अवश्य हुई, लेकिन उनके इस अप्रत्याशित और असमय आगमन से वह बहुत ज़्यादा उत्साहित न हो सकी। उसे लगा कि ये बेकार की बातें करेंगी और उसका समय नष्ट करेंगी। जाने की तैयारी की धुकधुकी के कारण जयंती मानसिक रूप से इस स्थिति में बिलकुल भी न थी कि बैठकर शांतिपूर्वक बातें कर सके। इस कारण वह उखड़े मन से 'हां, हूं, अच्छा! ओह!...नहीं तो!' कहती हुई अपने कपड़े लगाती रही।

इधर लल्ली और छोटी थीं कि गले तक उत्सुकतापूर्ण प्रश्नों से भरी हुई थीं। दोनों धड़ाधड़ सवाल करती जा रही थीं, "हमारे जीजाजी कैसे हैं?...यह सिलसिला शुरू कब हुआ?...और कैसे हुआ?...अच्छा, पहले किसने किसे देखा था?...और कहां?...जीजाजी मूंछें रखते हैं या नहीं?...फैशनेबल हैं या शेरवानी-पाजामे-वाले?...तुम लोग शादी के बाद कहां रहोगे?...कार तो होगी ही?...अच्छा, तुमने हमें पहले क्यों नहीं बताया?...हम क्या अब इतनी पराई हो गई हैं?" और 'पराई' शब्द से उन्हें ध्यान आ गया कि इस घर के लिए तो वे सचमुच ही पराई हो गई हैं...और तब इस शाश्वत सत्य की क्रूरता से आहत होकर वे दोनों रोने और सिसकने लगीं। उनकी रोने की आहट से 'गाथा' पढ़ती श्रीमती राजेश्वरीदेवी का ध्यान बंट गया और उनकी ओर आकर्षित हो गया। वे जयंती के कमरे में चली आईं और अपनी तीनों भतीजियों को एकसाथ उपस्थित देख, उनमें से दो को रोती हुई पाकर स्वयं भी उनके साथ रोने लगीं। ये तीनों महिलारत्न तब रोते-रोते चाचाजी के कमरे की ओर बढ़ गईं। जयंती की जैसे जान में जान आई। पसीना पोंछ वह नये सिरे से अपनी तैयारी करने लगी।

जयंती मुंह धोकर कमरे में वापस आई तो देखा, खाली कमरे में दरवाज़े के पास राय नौरंगीलाल खड़े हुए हैं और उसके सूटकेस और होल्डाल को शून्यदृष्टि से देखते हुए कुछ सोच रहे हैं।

एक-दो क्षण चुप रह, जयंती ने आहिस्ता से कहा, "चाचाजी !"

राय नौरंगीलाल ने चौंककर जयंती की ओर देखा और चेहरे पर मुस्कराहट लाते हुए बोले, "हां बेटा, एक ज़रूरी बात ध्यान आ गई थी, इसीलिए आया था।"

जयंती का दिल धक्-धक् करने लगा।

उसके निकट आते हुए राय नौरंगीलाल ने अपनी बंद मुट्ठी खोली और उसमें से नोट निकाल जयंती के हाथ में रख दिए। तब बोले, "ये छः सौ रुपये हैं—तुम्हारे खर्च के लिए...और ज़रूरत हो तो निःसंकोच तार दे देना। मैं फौरन भिजवा दूंगा।" जयंती से दृष्टि मिलते ही एक फीकी मुस्कराहट उनके चेहरे पर आ गई और जयंती ने बहुत ही आश्चर्य के साथ देखा कि चाचाजी मुस्कराहट का आवरण डाल अपनी आंखों में आ गए आंसुओं को छिपाने की असफल चेष्टा कर रहे हैं।

"चाचाजी !" कह जयंती शीघ्रता से आगे बढ़ उनके गले लग गई। चाचा-भतीजी दोनों देर तक एक-दूसरे के बहते आंसुओं को महसूस कर जैसे अपना मन हलका करते रहे।

जयंती के आंसू पोंछ राय नौरंगीलाल ने चलने का उपक्रम करते हुए कहा, "अच्छा बेटा, तुम्हारी गाड़ी का टाइम हो रहा है। मैं रामा को टैक्सी लाने के लिए कहता हूं।" और जयंती के सिर पर स्नेह से हाथ फेर वे बाहर चले गए। जयंती अपने चाचा के इस भावुक स्वरूप पर आश्चर्य करती हुई चुपचाप खड़ी सोचती रही।

एक टैक्सी से काम नहीं चल सकता था, इसलिए दो टैक्सियां आईं। इस बीच पुष्पा भी आ चुकी थी। लल्ली, छोटी और उनके बच्चे एक टैक्सी में समाए और दूसरी में पुष्पा और जयंती बैठीं। चाचाजी और चाचीजी से जयंती ने घर पर ही विदा ले ली।

स्टेशन पर लल्ली और छोटी के पति भी मौजूद थे, जो 'एक पंथ दो काज' वाली कहावत को सच साबित करने के लिए आए हुए

थे—यानी जयंती को 'सी ऑफ' भी कर देंगे और जयंती के चले जाने के बाद अपनी-अपनी पत्नियों को घर भी ले आएंगे। वे दोनों समय से कुछ पहले ही स्टेशन पहुंच गए थे—और शायद चांदनीचौक होते हुए गए थे, क्योंकि उन दोनों के हाथों में एक-एक फूलमाला थी। जयंती के सदैव गम्भीर और रिज़र्व्ड रहने के कारण उनकी यह हिम्मत तो न हो सकी कि जयंती के गले में माला डाल दें, इस कारण जयंती को नमस्ते कर उन्होंने बहुत आदर के साथ मालाएं जयंती के हाथ में दे दीं। जयंती ने उन्हें धन्यवाद देते हुए बहुत गम्भीरता के साथ मालाएं ले लीं और बर्थ पर अपने सामान की व्यवस्था करने में व्यस्त हो गई। पुष्पा इस नाटक को देख मंद-मंद मुस्कराने लगी।

पुष्पा को जयंती से जो कुछ भी कहना था, वह उसे टैक्सी में ही कह चुकी थी। चंद ज़रूरी हिदायतें और 'फाइनल टिप्स' देने भी वह नहीं भूली थी। लल्ली और छोटी जयंती से कुछ कहने की तैयारी कर ही रही थीं कि अचानक इस ख्याल से कि अब जयंती भी उनकी तरह पराई होने जा रही है, उन्हें रोना आ गया और वे खड़ी-खड़ी रोने लगीं। उन्हें रोता देख उनके बच्चे भी रोने लगे और प्लेटफार्म पर एक अच्छा-खासा मनोरंजक दृश्य उपस्थित हो गया। इधर-उधर टहलनेवाले कुछ लोग भी फर्स्ट क्लास के उस डिब्बे के निकट खड़े हो इस दृश्य का आनन्द लेने लगे। इस करुण दृश्य से प्रभावित होने के कारण ही वे कदाचित् मंद-मंद मुस्कराने लगे।

अपने पतियों, पुष्पा और जयंती के समझाने-बुझाने पर लल्ली, छोटी और उनके बच्चों ने अपना रोना-धोना बन्द किया। तभी इंजन ने सीटी दे दी और प्लेटफार्म पर जैसे एक छोटा-सा तूफान आ गया। गाड़ी धीरे-धीरे सरकने लगी और जयंती से 'बहुत कुछ' कहने की योजना बनाकर आनेवाली लल्ली और छोटी उस भगदड़ में जयंती से केवल इतना ही कह सकीं, "सावधान रहना ··· और अच्छी तरह रहना! ···"

गाड़ी में बैठी, हाथ हिलाती जयंती, प्लेटफार्म पर खड़े अपने परिचितों-सम्बन्धियों से धीरे-धीरे दूर होने लगी।

गाड़ी के जमुना-पुल पर पहुंचते ही जयंती ने व्यग्रता के साथ

अपना पर्स खोला और सुशील के ताज़े तार को नये सिरे से फिर एक वार पढ़ने लगी। सुशील ने लिखा था कि अगली सुवह ठीक आठ वजे देहरादून के प्लेटफार्म पर फर्स्ट क्लास के कम्पार्टमेंट के सामने वह गुलाव के फूलों का एक गुलदस्ता हाथ में लिए जयंती के स्वागत के लिए प्रस्तुत रहेगा। आशा है, जयंती उसे पहचान लेगी…

जयंती के चेहरे पर मुस्कराहट आ गई।

मुस्कराते हुए और विचित्र किन्तु सुखद कल्पनाएं करते हुए उसे कव नींद आ गई, यह जयंती को पता न चल सका।

गाड़ी अभी देहरादून के यार्ड में ही पहुंची थी कि जयंती उत्सुकता के कारण अपनी वर्थ से उठ, दरवाज़ा खोल खड़ी हो गई। उसके सामनेवाली लाइन पर एक इंजन आवाज़ करता हुआ खड़ा था। इंजन के अन्दर कोयला भरा जा रहा था। दूसरी ओर एक खाली ट्रेन खड़ी हुई थी। लगता था, उसकी धुलाई अभी-अभी ही समाप्त हुई है, क्योंकि साफ-सुथरे कम्पार्टमेंटों के वाहर से पानी टपक रहा था। रेलवे के कुछ खलासी और प्वाइण्ट्समैन अपनी वर्दी में यार्ड में अपने कामों में व्यस्त थे…जयंती को सारा दृश्य वहुत भला और सुखद लगा।

गाड़ी अव सांप की तरह तुड़ती-मुड़ती हुई स्टेशन के अन्दर घुसने लगी थी। प्लेटफार्म आरम्भ हो गया था, जोकि लगभग खाली ही था।

जयंती का दिल वुरी तरह धड़कने लगा…यदि सुशील प्लेटफार्म पर न हुए तो क्या होगा ?…वह क्या करेगी ?…वह और अधिक झुककर अपने आगे आते हुए प्लेटफार्म को उत्सुकता के साथ देखने लगी।

और तभी उसकी दृष्टि व्हीलर के स्टॉल के सामने खड़े सुशील पर पड़ी। उसका दिल बहुत ही ज़ोर से धड़का और तब एकदम ही रुक गया। वह जैसे पत्थर की बन गई।

व्हीलर के स्टॉल के सामने अपने दायें हाथ में गुलाब के फूलों का गुलदस्ता लिए जो व्यक्ति खड़ा था वह सुशील ही था; किन्तु वह नवयुवक नहीं, वृद्ध था और साठ से कम का नहीं प्रतीत हो रहा था। जयंती के पर्स में जो फोटो था वह इसी व्यक्ति का था ; लेकिन वह फोटो ताज़ा नहीं था ; आज से शायद तीस-पैंतीस वर्ष पहले का था जब कभी यह व्यक्ति नवयुवक रहा होगा। अपनी छड़ी संभालते हुए वह वृद्ध व्यक्ति बहुत उत्सुकता के साथ इधर-उधर देख रहा था। कम्पार्टमेंट से उतरनेवाले हर व्यक्ति पर उसकी दृष्टि पड़ती थी और तब जैसे निराश-सा होकर वह दूसरी ओर देखने लगता था। उसके हाथ में गुलदस्ता चमक रहा था।

जयंती पर तो जैसे बिजली गिर गई थी। वह कुछ देर उसी तरह कम्पार्टमेंट के दरवाज़े की आड़ में खड़ी रही, तब सुशील से दृष्टि बचा फुर्ती से नीचे उतर आई और प्लेटफार्म के एक सुनसान कोने की ओर बढ़ गई। एक बेंच खाली देख वह उसपर बैठ गई और सोचने लगी कि यह सब क्या हो गया है ?…

उसका दिमाग जैसे चक्कर खा रहा था और उसे लग रहा था कि कोई भारी चीज़ जैसे अनवरत रूप से उसकी चेतना पर आघात करती जा रही है। उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह अब क्या करेगी।…अपने घरवालों को मुंह किस तरह दिखलाएगी। कुछ भी न समझ-बूझने पर उसे अपने ऊपर ही क्रोध आने लगा—क्यों इतना पढ़-लिखकर भी वह इस तरह के फिल्मी रोमांस के चक्कर में पड़ गई ?…क्यों वह इतनी मूर्ख बन गई कि पुष्पा के आदेशों को ब्रह्मवाक्य मान, बिना सोचे-विचारे आगे ही बढ़ती चली गई और आखिर इस फंदे में फंस गई ?…उसे पुष्पा पर भी बहुत क्रोध आया… चुड़ैल चिट्ठियों में 'हुक' पैदा करवाती थी…लो, पैदा हो गए न 'हुक'…फंस गई न मैं खुद अपने ही तैयार किए हुकों में !…अपनी मूर्खताओं पर वह झुंझलाकर रो पड़ी…उद्विग्न मन का गुबार तो

के साथ—और तब पूछा, "अच्छा, स्टेशन से बाहर निकलने का कोई और भी रास्ता है ?"

नवयुवक मुस्कराया। तब बोला, "तो मैं ठीक था। आपका सामान गुम गया है न ?"

जयंती ने तत्काल उत्तर दिया, "नहीं, यह बात नहीं है। दरअसल मैं मेन गेट से नहीं जाना चाहती···" फिर कुछ एक संदेह की दृष्टि से देखते नवयुवक से अपनी दृष्टि हटाती हुई बोली, "मेरा ख्याल है, मेन गेट पर एक साहब मेरे इन्तज़ार में खड़े होंगे। मैं उनसे नहीं मिलना चाहती।"

"अच्छा ! यह बात है !···" नवयुवक ने बच्चों के से कौतुक-पूर्ण भाव से कहा, "तो फिर आप इधर से आइए !" और वह एक ओर को बढ़ने लगा।

जयंती ने थोड़ी फुरती बरती। तेज़ कदम उठा नवयुवक के निकट आ वह बोली, "मेहरबानी कर मेरा सूटकेस और बिस्तर तो उठा लाइए। वह उधरवाले फर्स्ट क्लास के एक कम्पार्टमेंट में पड़ा हुआ है।"

नवयुवक ने मुड़कर अचरज के साथ जयंती की ओर देखा। तब बिना बोले वह फर्स्ट क्लास के कम्पार्टमेंट की ओर बढ़ गया। थोड़ी ही देर में, सामान उठाए, वह जयंती के पास आ गया और सिर हिला उससे बोला, "सामान ठीक है न ?···अब चलिए !···" एक दूसरे फाटक से—जहां कोई भी चैकर नहीं था—वे दोनों स्टेशन से बाहर निकल आए।

तांगे के अड्डे के निकट पहुंचते ही युवक ने प्रश्न किया, "तांगा कहां के लिए किया जाए ?"

जयंती घबरा गई। वह चुपचाप नवयुवक का मुंह ताकने लगी।

नवयुवक कुछ देर तो जयंती के उत्तर की राह देखता रहा ; फिर जयंती की घबराहट भांप उसने सामान नीचे उतार दिया और होल्डाल की ओर इशारा कर जयन्ती से बोला, "बैठिए !"

जयंती के निर्विरोध होल्डाल पर बैठ जाने के बाद उसने कहना शुरू किया, "देखिए, आप मुझे माफ कीजिएगा ; लेकिन आपकी

जितनी भी बातें हैं उनसे मुझे आपके बारे में तरह-तरह के शक हो रहे हैं। मुझे ऐसा लग रहा है कि या तो आप घर से भागकर आई हैं या घर से झगड़कर। दोनों ही हालतों में आपने बहुत बड़ी गलती की है।···बहरहाल इस चीज़ से मेरा कोई सरोकार नहीं है। मुझे जो बात साफ-साफ दीख रही है वह यह है कि आप देहरादून पहली बार आ रही हैं; और क्योंकि बिना किसी तैयारी के आई हैं, इसलिए आपको इस शहर के बारे में धेला-भर भी जानकारी नहीं है··· वैसे तो खतरे की कोई बात नहीं है, लेकिन नये आदमी को तो हर नई जगह बहुत ही ज़्यादा होशियार रहना चाहिए··· बात यह है कि ज़माना बहुत खराब है। मुमकिन है कि इस शहर के लिए नई होने के कारण आप मुफ्त में ही किसी परेशानी में फंस जाएं··· इस कारण अगर आप ज़रूरत समझें और आपको संकोच न हो तो इस नये शहर में आप मेरी मदद ले सकती हैं। यह मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं आपको धोखा नहीं दूंगा।"

जयन्ती बहुत आश्चर्य के साथ नवयुवक का मुंह ताक रही थी—यह व्यक्ति बात कितने शाइस्ता तरीके से कर रहा है, जबकि हुलिया इसका मज़दूरोंवाला है!···इसकी बातें सुन उनपर विश्वास करने का मन तो होता है, किंतु इसका हुलिया देख लगता है कि इसकी दिमागी हलचल बिजली के इस अगले खम्भे से आगे नहीं जा सकती।

जयंती को अपनी ओर सशंकित दृष्टि से देखता पाकर नवयुवक फिर बोला, "देखिए, आप मेरे बारे में गलत न सोचिए। मैं पढ़ा-लिखा लड़का हूं। डेढ़ साल हुए मैं लखनऊ यूनिवर्सिटी से बी० ए० कर चुका हूं। इन दिनों मेरी किस्मत मेरा साथ नहीं दे रही है। यही वजह है कि मुसीबतों और परेशानियों का सामना करते हुए मैं इस दरजे को पहुंच गया हूं। आज मैं मेहनत-मज़दूरी से अपना पेट भरता हूं। नाम मेरा राजेन्द्र है···आप विश्वास कीजिए, मैंने न किसी बैंक की डकैती में हिस्सा लिया है और न ही किसी सरकारी या प्राइवेट फर्म में कोई गबन किया है। मैं बड़े अच्छे और शरीफ घराने का हूं। लाचारी और बेकारी की वजह से मेरी यह हालत हो गई है।"

जयंती को अब नवयुवक पर अविश्वास करने का कोई कारण

नहीं दीखा। कुछ सोचते हुए उसने नवयुवक से कहा, "मुझे तुमपर विश्वास तो है, लेकिन मेरी समझ में यह नहीं आ रहा है कि मैं तुमसे क्या सहायता ले सकती हूं ? तुम किस प्रकार मेरी सहायता कर सकते हो ?...बात यह है कि अपनी और अपनी एक सहेली की मूर्खता से मैं एक उलझन में पड़ गई हूं और उस उलझन से निकल पाने का कोई ठीक तरीका मुझे नहीं सूझ रहा है।"

युवक जयंती के थोड़ा निकट आ गया और कुछ दिलचस्पी के साथ कहने लगा, "अगर आपको कोई ऐतराज़ न हो तो आप मुझे ज़रूर बताएं कि आप किस उलझन में फंस गई हैं...यह मैं जानता हूं कि मैं किसी लायक नहीं हूं, लेकिन तिसपर भी आपकी परेशानी जानना चाहता हूं—शायद मैं आपके कुछ काम आ सकूं...कभी-कभी एक बेकार पत्थर या एक खोटा सिक्का भी काम में आ जाता है—आपने देखा होगा।" बात समाप्त कर वह मुस्करा दिया।

इस बार उसकी मुस्कराहट जयंती को बहुत अच्छी लगी। वह भी मुस्करा दी। तब बहुत झेंपते और शरमाते हुए उसने बहुत संयत भाव से पूरी कहानी शुरू से आखिर तक राजेन्द्र को सुना दी। राजेन्द्र बिना हंसे और मुस्कराए बहुत तल्लीनता के साथ जयंती की कहानी सुनता रहा ; तब एक लम्बी सांस लेकर धीमे स्वर में बोला, "अगर मैं आपको परेशान हालत में न देखता, तो यकीन मानिए, मैं आपकी यह कहानी सुनकर यही समझता कि आपने हिन्दुस्तानी फिल्मों के लिए कोई कहानी लिखी है...बात यह है कि इस तरह की अनगढ़ और असम्भव कहानियां हिन्दुस्तानी फिल्मों में ही मिलती हैं—असल ज़िन्दगी में कहीं नहीं। मगर आज आपने साबित कर दिया कि असल ज़िन्दगी में भी इस तरह की घटनाएं घट सकती हैं।"

जयंती धीमे स्वर में हंसने लगी। इस युवक ने उसे उसकी परेशानी का एहसास ही नहीं होने दिया था...इस समय युवक उसे अपने आत्मीयों से भी बढ़कर प्रतीत हो रहा था...वह अगर यहां न होता तो उसकी क्या हालत होती ?...

युवक—राजेन्द्र—अभी तक परेशानी की मुद्रा में इधर-उधर देखता हुआ जयंती की समस्या के सम्बन्ध में सोच रहा था। कुछ

ेर चुप रह जैसे उसने अपने-आपसे ही कहा, "सचमुच, मेरी भी समझ में नहीं आ रहा है कि अब किया क्या जाए।···जब आप सुशील साहब से प्लेटफार्म पर नहीं मिली हैं तो उनके घर जाकर उनसे भेंट करने का तो मतलब ही नहीं है। वह प्रसंग तो अब खतम ही हो चुका है।···दूसरा तरीका अब यही बच रहता है कि आप जो भी बस आपको इस समय मिल सकती है, उससे दिल्ली लौट जाएं··· मगर फिर वही सवाल उठता है कि आप अकेली दिल्ली कैसे लौट सकती हैं?···आपको अकेली देख आपके घरवाले लोग और परिचित क्या कहेंगे?···और दूसरे ऐसा करने से आपके रुपये-पैसोंवाला मामला तो वहीं का वहीं अटका रह जाएगा।"

राजेन्द्र की बात से अचानक जयंती के मस्तिष्क में एक विचित्र और साहसपूर्ण विचार आया। कुछ क्षण वह सोचती रही, तब जैसे निश्चय-सा कर उसने दृढ़ स्वर में राजेन्द्र से प्रश्न किया, "राजेन्द्र, तुम काम की तलाश में हो न?···तुम मेरा एक काम कर सकोगे?···"

राजेन्द्र मुस्कराया। तब बोला, "मैं तो पहले ही कह चुका हूं कि मैं ईमानदार काम की तलाश में हूं। आप काम बताइए; अगर मेरे लायक हुआ तो मैं ज़रूर करूंगा।"

जयंती बोली, "ठीक है। तुम अब मेरी बात सुन लो। तुमने अभी कहा था—तुम्हें रुपये की ज़रूरत भी है।"

"जी हां।" राजेन्द्र ने विनम्रतापूर्वक कहा।

"ठीक," जयंती बोली, "मैं तुमसे जो काम करवाऊंगी उसके लिए मैं तुम्हें रुपया दूंगी···काम, मेरा खयाल है, तुम समझ ही गए होगे···तुम्हें मेरे साथ दिल्ली चलकर वहां मेरे सम्बन्धियों के सामने एक दिन के लिए मेरे पति का पार्ट करना होगा···तुम्हारे ऐसा करने से मेरी सारी परेशानियां दूर हो जाएंगी। बात यह है कि जैसा तुमने भी सोचा है, मैं अब घर लौटकर यह नहीं कह सकती कि मेरे सारे हवाई किले जमीन पर आ गए हैं···दूसरे, मैं अपने पैसे व अपने हिस्से के जेवर आदि भी चाचाजी से लेकर दिल्ली छोड़ देना चाहती हूं। यह बात तब तक मुमकिन नहीं है जब तक मेरे चाचाजी मेरे पति को न देख लें और उन्हें पूरी तरह संतोष न हो जाए···तुम समझदार और

स्मार्ट हो। मुझे विश्वास है, चाचाजी को तुमसे मिलकर बहुत संतोष होगा। उनकी संतुष्टि से मुझे मेरे हिस्से का रुपया मिल जाएगा और उनकी ओर से दिल्ली छोड़ने की आज्ञा भी मिल जाएगी। दिल्ली से लौटकर मैं तुम्हें तुम्हारा मेहनताना या फीस, जो भी तुम कहो, दे दूंगी और इस तरह तुम्हें इस छोटे-से नाटक से छुट्टी मिल जाएगी! ...क्यों, तुम क्या कहते हो?..." उसका दिल तेज़ी से धड़कने लगा था।

राजेन्द्र को चुप देख वह कम्पित स्वर में फिर कहने लगी, "यह तो साफ ही है कि हमारी-तुम्हारी शादी सिर्फ नाम-मात्र के लिए ही होगी। हम लोग कोर्ट-मैरिज कर लेंगे। उसमें किसी तरह की कोई झंझट भी नहीं होगी..." रुककर, राजेन्द्र के विचारपूर्ण चेहरे को देखती हुई वह फिर बोली, "तुम सज्जन हो और भले घर से सम्बन्धित हो, इसलिए मैं यह आशा करती हूं कि तुम ज़रूर मेरी मदद करोगे।...तुम अभी-अभी मदद करने के लिए कह भी रहे थे...मैं तुम्हारे लिए दो-एक बढ़िया सूट और चन्द ज़रूरी सामान ले दूंगी। कल हम लोग कोर्ट में जाकर शादी कर लेंगे और कल रात की ही गाड़ी से दिल्ली के लिए रवाना हो जाएंगे। दिन-भर दिल्ली में रहकर और चाचाजी से सारी बातों का निबटारा कर हम लोग रात की गाड़ी से फिर देहरादून वापस आ जाएंगे। यहां आकर हम लोग वकील से मिलकर और उसकी सलाह लेकर 'लीगल सेपरेशन' के लिए दरख्वास्त दे देंगे...उसके बाद मैं तुम्हें इस नाटक में अभिनय करने के लिए आठ सौ...अच्छा, एक हज़ार रुपये दे दूंगी। तुम तब, इस रहस्य का उद्घाटन करने के अलावा, जो भी करना चाहोगे उसके लिए आजाद होगे...बोलो, तुम्हारा क्या निश्चय है?" जयंती किसी नाटक के रटे हुए पार्ट की तरह एक सांस में अपनी सब बात कह गई।

राजेन्द्र ने अपना चेहरा ऐसा बनाया जैसे उसे बहुत कष्ट हो रहा हो, तब धीरे से बोला, "मुझे रुपये की ज़रूरत तो है, लेकिन इस तरह से नहीं...आप मुझे ऐसा न समझिए...मैं मानता हूं, आप बहुत सुन्दर हैं, समझदार हैं, बहुत भली हैं, तिसपर भी मैं ऐसा नहीं कर

"इकट्ठे ही दे लीजिएगा।" राजेन्द्र ने गम्भीर भाव से कहा "कदम-कदम पर आपको मुझे धन्यवाद देने का मौका मिलेगा। कह तक दीजिएगा? आप कहती-कहती थक जाएंगी—मैं सुनते-सुनते नाटक खतम होने पर अपने मेक-अप उतार हम दोनों बैठ जाएंगे और एक-दूसरे को जी भरकर धन्यवाद दे देंगे। क्यों, ठीक रहेगा न?..."

जयंती ने प्रत्युत्तर में कुछ नहीं कहा। बहुत ही प्यारे तरीके से वह मुस्कराने लगी। उसे लग रहा था जैसे वह एकदम भारमुक्त हो गई है।

लेकिन राजेन्द्र को लग रहा था, जैसे असंख्यों गृहस्थियों का बोझ एकदम उसपर आ पड़ा है। एक ज़िम्मेदार व्यक्ति की तरह वह बहुत ही चिंतित भाव से बोला, "अच्छा...तो अब आप किसी होटल में आराम कीजिए। मैं इतने..."

बात काटती हुई जयंती बोली, "लेकिन मैं तो यहां किसी भी होटल का नाम-पता नहीं जानती। आप मुझे बतलाइए, कहां ठहरा जाए।"

"ओह! यह तो मैं भूल ही गया था।" राजेन्द्र ने फीकी मुस्कराहट के साथ कहा; तब कुछ सोचकर बोला, "अच्छा, आप आइए मेरे साथ।"

तांगेवाले को आवाज़ दे बुलाकर उसने उसमें सामान रखवाया और जयंती के साथ तांगे पर बैठते हुए उसने तांगेवाले को 'ग्रीपम होटल' चलने को कहा। उसकी आकृति और व्यवहार को देख उस समय ऐसा लग रहा था जैसे वह एक लम्बे अरसे से गृहस्थी चलाता आ रहा है।

...ीषम होटल' पहुंच, जयंती के लिए एक अच्छा और आरामदेह
...लेकर राजेन्द्र ने सामानसहित जयंती को कमरे के अन्दर पहुं-
...दिया। होटल में बैरे के सलाम कर विदा हो जाने के बाद उसने
...हिचकिचाते हुए जयंती से कहा, "अच्छा, अब आप स्नान आदि
...जिए और आराम कीजिए... रात-भर सफर के कारण आप थकी
...होंगी और... और मुझे कुछ पैसे दे दीजिए ताकि मैं भी अपने
...लिये को दुरुस्त कर सकूं... और दोबारा शरीफ इंसान बन सकूं...
...किन देखिए, आपको मुझपर विश्वास है न ?"

अपना सूटकेस खोल उसमें से पैसे निकाल राजेन्द्र के निकट आती हुई जयंती बोली, "आप भी कई बार बड़ी ही विचित्र बात करते हैं ...देखिए, अब आगे यह विश्वास-अविश्वास की बात कभी उठाइएगा।" और सौ-सौ के दो नोट निकाल राजेन्द्र को देती हुई पूछने लगी, "दो सौ काफी होंगे या और दूं ?... देखिए, संकोच न कीजिएगा।"

नोट हाथ में ले, बच्चों की तरह सिर हिलाते हुए राजेन्द्र ने कहा "मेरे ख्याल से फिलहाल तो ये काफी होंगे!... मुझे अपने लिए सू... कपड़ों और जूतों का ही प्रबंध तो करना है। यह सब इनमें हो जाएगा ; बल्कि काफी रुपये बच भी जाएंगे। अच्छा, अब मैं चलता हूं... आप आराम कीजिए। मैं दो-तीन घंटे के अंदर-अंदर आ जाऊंगा। तब हम लोग, कल जो कुछ करना होगा, उसके बारे में विस्तार के साथ बातें कर लेंगे। अच्छा, नमस्ते।"

और जयंती को इस परेशानी के बीच भी मंद-मंद मुस्करा... हुए छोड़ वह अपनी चप्पलें फटफटाता हुआ तेज़-तेज़ बाहर च... गया।

राजेन्द्र के कमरे के बाहर चले जाने के बाद जयंती ने दर... को चटखनी बंद कर दी और निढाल-सी होकर सोफे पर ले...

और अपने पैर हिलाते हुए सोचने लगी कि यह सब क्या हो गया है।···पिछले दो-तीन दिनों की घटनाएं चलचित्र की भांति उसकी आंखों के सामने घूम-फिरकर आने लगीं। बहुत देर तक वह उसी तरह से खोई हुई पड़ी अपने अतीत और वर्तमान का विश्लेपण करती रही। भविष्य के बारे में सोचने का तो उसके अंदर साहस तक न था।

काफी देर बाद वह थकी-सी उठी और कमरे से ही लगे हुए स्नानगृह में चली गई।

जब वह साफ-सुथरे कपड़े पहन बाहर आई तो बारह के आस-पास का समय था। उसे ध्यान आया, राजेन्द्र नौ बजे यहां से गया था और कह गया था कि वह दो-तीन घंटे में वापस आ जाएगा। अब शायद वह आने ही वाला होगा। वह उसका इंतज़ार करने लगी। घड़ी की सुइयां आगे-आगे सरकती रहीं।

सवा बारह···पौने एक···एक···सवा···और धीरे-धीरे डेढ़ भी बज गया, लेकिन राजेन्द्र नहीं लौटा। जयंती की व्यग्र दृष्टि रह-रहकर दरवाजे की ओर उठ जाती और वहां किसीकी छाया तक न देख निराश भाव से लौट आती। जब एक बजकर चालीस मिनट हो गए, तो उसके मन में एक खटका-सा हो गया।

अचानक दरवाज़े पर एक 'ठक्-ठक्' हुई। जयंती ने सिर उठा दरवाज़े की ओर देखा। फिर दूसरी 'ठक्-ठक्' हुई। जयंती फुर्ती के साथ उठ बैठी और लपककर दरवाज़े की ओर बढ़ गई। बहुत आशा और उत्साह के साथ उसने दरवाज़ा खोल दिया।

लेकिन दरवाज़ा खोलते ही उसका सारा उत्साह समाप्त हो गया। बहुत निराशा के साथ उसने देखा कि 'ठक्-ठक्' करनेवाला व्यक्ति राजेन्द्र नहीं, होटल का बेयरा है जो बहुत तमीज़ के साथ यह पूछ रहा है कि 'मेम साहब, लंच किधर लेंगी?···डाइनिंग-रूम में आएंगी? या हुक्म दें तो यहां कमरे में ही भिजवा दिया जाए!'··· और अपनी बात समाप्त कर जयंती का उत्तर सुनने के लिए हाथ पर हाथ रखे चुपचाप खड़ा हो गया है।

झुंझलाहट के कारण जयंती कुछ नहीं बोल सकी। सिर को

एक झटका-सा देकर वह फिर सोफे पर लौट आई। बेयरा कुछ देर तो मूढ़ दृष्टि से उसे देखता रहा, फिर सिर झुकाकर अदब से बाहर चला गया। वह समझ गया था कि इस समय अपनी अकल के अनुसार वह जो कुछ भी करेगा, वह ठीक होगा और मेम साहब को मान्य भी होगा।

यही कारण था कि पांच-सात मिनट बाद ही जयंती ने देखा कि बेयरा बड़ी तत्परता के साथ खाने की थाली और पानी का गिलास लिए अंदर आ रहा है। ढकी हुई थाली मेज़ पर सजाकर, पानी पास रख, सिर झुका यह निवेदन कर कि 'किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो घंटी बजा दीजिएगा' बेयरा कनखियों से इन विचित्र मेम साहब को देखता हुआ कमरे के बाहर चला गया।

जयंती ने उठकर दरवाज़े की चटखनी चढ़ा दी और टूटी हुई सी बिस्तर पर आ गिरी। इतनी देर से रुके आंसू जैसे बाहर आने की राह ही देख रहे थे। एक-एक कर वे आंख से बाहर आने लगे और तकिया भिगोने लगे। उसे विश्वास हो गया था कि सुशील की तरह राजेन्द्र ने भी उसे धोखा दिया है··· एक दिन में दो बड़े धोखे ! ··· उसका हृदय दुःख और वेदना से फटा जा रहा था ! ···रोते-रोते कब उसकी आंख लग गई, यह उसे पता न चल सका।

जयंती की आंख खुली तो उसने देखा कि कमरे के अंदर हलका-सा अंधेरा फैल आया है। उसने यह भी महसूस किया कि उसके सिर में हलका-हलका दर्द भी हो रहा है। आंख खुलने के बाद कुछ देर तो वह यही समझने की कोशिश करती रही कि वह कहां है और कैसे आ गई है। एक झटके के साथ उठकर बैठते ही उसकी दृष्टि पास की मेज़ पर रखी ढकी हुई थाली पर पड़ी और निमिष-मात्र में जैसे उसकी स्मृति लौट आई और उसे सब कुछ याद आ गया। अपनी परेशानी उसे चुभे कांटे की तरह फिर दुःख देने लगी··· अब तो इस बात में लेश-मात्र भी संदेह नहीं रहा था कि राजेन्द्र न केवल झूठ बोल उसे धोखा दे गया है, वरन उससे दो सौ रुपये तक ठगकर चला गया है··· उसने घड़ी देखी—साढ़े छः हो रहे थे। यदि राजेन्द्र की नी
साफ होती तो अब तक वह तीन बार आ चुका होता ! ···

गए सो गए, उसकी समस्या तो सुलझने के वजाय और ज़्यादा उलझ गई···अव क्या और किस तरह होगा, उसने यह सोचने की कोशिश की ; और इस कोशिश में यह महसूस किया कि उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा है और अपनी वेवसी व अपने दुर्भाग्य पर रोने के अलावा उसे कुछ भी नहीं सूझ रहा है। दोनों हाथों के आसरे अपना सिर टेके वह उसी तरह वैठी सोचती और रोती रही।

तभी दरवाज़े पर खट्-खट् हुई। वेयरा खाने के वर्तन लेने आया होगा, यह सोच जयंती साड़ी से आंसू पोंछती उठी और दरवाज़ा खोल फिर अपने सोफे की ओर मुड़ गई।

किंतु वेयरा को कमरे के अन्दर न घुसते देख उसने कुछ लमहों वाद आश्चर्य के साथ उस व्यक्ति की ओर देखा जो दरवाज़े के वाहर ही ठिठका हुआ खड़ा था। जयंती कुछ सहम-सी गई। जयंती को मुड़कर अपनी ओर देखते हुए पाकर वह छायामूर्ति कुछ हिली और कमरे के अन्दर आ गई। जयंती का रक्त खट्-खट् कर वजने लगा। कुछ साहस कर उसने मेज़ पर रखे टेवल-लैम्प का स्विच दवा दिया। कमरे में हलका नीला प्रकाश फैल गया। उस रोशनी में आगन्तुक को देख और पहचान वह जैसे सकते में आ गई।

वहुत ही वढ़िया सिले हुए, एक नये सूट में सजा हुआ, राजेन्द्र उसके सामने कुछ शरमाता-सा हुआ खड़ा था।

और जयंती को लगा—अव वह वहुत ज़ोर से रो पड़ेगी।

दृष्टि मिलते ही राजेन्द्र ने सिर झुका 'आदाव अर्ज़ !' किया और कुछ आश्चर्य के साथ पूछा, "आपने अभी तक लाइट क्यों नहीं जलाई थी ?···" लेकिन जयंती को मुंह फेर सिसकियां भरते देख वह हक्का-वक्का रह गया। आगे वढ़ जयंती के विलकुल पास आ वह उससे उसके रोने का कारण पूछने ही वाला था कि जयंती ने उसके दायें वाज़ू पर अपना सिर टेक दिया और फूट-फूटकर रोने लगी। राजेन्द्र हतप्रभ-सा उसी तरह चुपचाप खड़ा रहा।

खुले दरवाज़े का ध्यान आने पर राजेन्द्र को कुछ चेतना हुई और वहुत स्नेह के साथ सहारा देते हुए उसने जयंती को सोफे पर विठा दिया। तव वह वहुत ही विनयपूर्वक जयंती को अपनी स्थिति

समझाता हुआ बोला, "देखिए, मुझे बहुत ही अफसोस है कि मुझे ज़रूरत से कहीं ज़्यादा देर हो गई और मेरी वजह से आपको इतनी परेशानी उठानी पड़ी। लेकिन मजबूरी थी। मैंने जो सूट पसंद किया था वह मेरे फिट न था; दिन-भर टेलर मास्टर के सामने ही बैठा रहकर मैंने उसे फिट करवाया है और अब दौड़ता-भागता सीधा यहां चला आ रहा हूं। दिन में दो-तीन बार मैंने आपको टेलीफोन से कॉण्टेक्ट करने की कोशिश भी की थी, लेकिन दो बार तो नम्बर 'एंगेज्ड' मिला और तीसरी बार आपके नम्बर की जगह मुझे सरवे ऑफ इंडिया का नम्बर मिल गया। सो साहब, झुंझलाहट में टेली-फोन करने भी बंद किए। उधर टेलर मास्टर की हालत यह कि मुझे रह-रहकर दिलासा दे रहे हैं कि बस, दस मिनट में तैयार हो जाता है। नतीजा यह हुआ कि इस देर का खमियाज़ा आपको भुग-तना पड़ा। मैं अंदाज़ा लगा सकता हूं कि बिना सूचना के मेरे इतनी देर गायब रहने से आपको कितनी ज़ेहनी परेशानी हुई होगी!... और आपने मेरे बारे में क्या-क्या नहीं सोचा होगा!...अब जाने-अनजाने जो कुछ भी हो गया है, उसके लिए सचमुच ही मैं बहुत शर्मिन्दा हूं और आपसे दोनों हाथ जोड़ क्षमा चाहता हूं।" अपना लम्बा भाषण समाप्त कर उसने अपने दोनों हाथ जोड़ दिए और अपना सिर नीचे कर लिया।

तब फिर अचानक अपना सिर ऊपर कर जयंती के गम्भीर चेहरे की ओर दृष्टि डालता हुआ बोला, "साथ ही मैं यह भी प्रार्थना करना चाहता हूं कि अब आप अपना क्रोध त्यागकर अगर ज़रा-सा मुस्करा दें तो यह बिगड़ी बात संवर जाए।"

न चाहने पर भी जयंती के चेहरे पर मुस्कराहट आ गई। अपना मुंह दूसरी ओर कर वह मुस्कराने लगी।

राजेन्द्र उठकर खड़ा हो गया और बोला, "अच्छा, अब यह तो बताइए कि इन कपड़ों में मैं कैसा लगता हूं।...या शायद यह पूछना ज़्यादा सही और उचित होगा कि ये कपड़े मुझपर कैसे लगते हैं।... देखिए, सच-सच बतलाइएगा...मुझे इन कपड़ों में देख यह तो नहीं लगता कि मैंने किसी दोस्त से उधार लेकर अपने पर डाल रखे हैं?"

जयंता ने दृष्टि घुमाकर राजेन्द्र की ओर देखा—सचमुच ही बढ़िया सिले वे कपड़े राजेन्द्र पर बहुत ही खिल रहे थे। उस वेश-भूषा में राजेन्द्र बहुत ही स्मार्ट, एक्टिव और अपनी उम्र से पांच वर्ष कम लग रहा था···कुछ लज्जा-सी कर उसने अपनी दृष्टि दूसरी ओर फेर ली।

राजेन्द्र ने प्रश्न किया, "आपने मेरे सवाल का जवाब नहीं दिया। बताइए न, ये कपड़े उधार मांगे तो नहीं लगते ?"

"नहीं तो।" जयंती ने संक्षिप्त उत्तर दे बात समाप्त करने की कोशिश की।

"अच्छा, ये कपड़े लगते कैसे हैं ?" राजेन्द्र ने कोशिश जारी रखी कि बात समाप्त न हो।

हलकी-सी झल्लाहट के साथ जयंती ने झटके से उत्तर दिया, "बहुत अच्छे लगते हैं।···ये कपड़े आपपर अच्छे लग रहे हैं···और आप इन कपड़ों में अच्छे लग रहे हैं···" मन में बोली—'आप यही सुनना चाहते थे न ?'

राजेन्द्र ने प्रसन्न होते हुए कहा, "बस, देख लीजिए, यूनिवर्सिटी में मेरी यही ड्रेस रहती थी। हूबहू ऐसा ही सजा-संवरा रहता था मैं···अब आपसे क्या कहूं !···शर्म आती है···लेकिन आप सच जानिए, मेरे साथ की लड़कियां मुझे बड़ी हसरत के साथ देखा करती थीं···" और उसने एक लम्बी सांस ली।

जयंती को हंसी आ गई।

राजेन्द्र के दिल पर से जैसे पहाड़ का बोझ हट गया। बहुत प्रसन्नता के साथ बोला, "शुक्र है खुदा का ! आप हंसीं तो।···मुझे लगता है, आज बारिश ज़रूर होगी।···जिस आदमी ने न हंसने की कसम खा रखी हो, वह अगर हंसने लगे तो क्या बारिश नहीं होगी ! ···बल्कि मेरे ख्याल से तो आंधी-तूफान भी आएगा।"

जयंती का हंसना नहीं बन्द हुआ। वह और भी ज़्यादा हंसने लगी।

अचानक राजेन्द्र बोला, "अरे !···मैं तो भूल ही गया हूं···मुझे तो बहुत ज़ोर से भूख लग रही है···चलिए, फौरन खाना खा आएं।

मैंने सुबह से कुछ नहीं खाया है।"

"मैंने भी।" शरमाते हुए जयंती ने कहा।

'च् च् च्' करते हुए राजेन्द्र ने अपने दोनों कानों के सिरे छुए और बोला, "वेरी सॉरी।...आप सचमुच मुझे माफ कर दीजिए...आइंदा ऐसी गलती न होगी...अच्छा, अब देर न कीजिए...पेट में चूहे जमनास्टिक कर रहे हैं। आइए।"

और जयंती के साथ वह कमरे से बाहर हो गया।

बरामदे में उसे ध्यान आया कि होटल में तो आठ से पहले डिनर नहीं मिल सकेगा। जयंती को यह बात बताते हुए उसने कहा, "चलिए, बाहर चलकर किसी बढ़िया से रेस्टरां में खाना खा आएं। यहां तो खाने के लिए काफी इन्तज़ार करना होगा। लेकिन देखिए, एक शर्त है—बिल मैं 'पे' करूंगा। यदि आपको यह शर्त मंज़ूर है तो चलिए, नहीं तो रहने दीजिए। यहा खा लेंगे।"

जयंती को राजेन्द्र का बाहर खाने का प्रस्ताव बहुत अच्छा लगा; राजेन्द्र के बिल चुकाने की बात उसे बहुत ही संभ्रांत और सम्मानजनक तथा गौरवपूर्ण लगी; और दृष्टि उठाकर राजेन्द्र की ओर करने पर होटल के उस कम रोशन बरामदे की छिट-पुट व बिखरी रोशनी में उसे राजेन्द्र का चेहरा बहुत ही सुन्दर और आकर्षक लगा। उसे विश्वास हो गया कि राजेन्द्र सचमुच ही किसी शरीफ घराने से सम्बद्ध है, वरना ये विचार उसके मन में उठते ही नहीं। उसे लगा—राजेन्द्र पर सहज भाव से विश्वास किया जा सकता है।

मुस्कराकर उसने कहा, "मंज़ूर है। बिल आप ही दीजिएगा। मुझे कोई ऐतराज़ न होगा।"

राजेन्द्र भी मुस्कराया। बोला, "मैं यह जानता था। मैंने तो योंही आपका मन रखने के लिए यह बात पूछ ली थी।"

जयंती की मुस्कराहट बढ़ गई। पता नहीं क्यों, राजेन्द्र से कुछ फासला रख इस तरह उसके साथ-साथ चलना उसे इस समय बहुत ही अच्छा लग रहा था।

'इंडियाना' के 'मर्करी बार्स' से आलोकित उस भीड़भाड़पूर्ण हॉल में जब राजेन्द्र और जयंती ने एकसाथ प्रवेश किया, तो वहां

ठे लगभग सभी व्यक्ति अपनी गरदनें मोड़ उन 'नये चेहरों' को खने लगे।

लोगों के इस तरह मुड़-मुड़कर देखने से दोनों कुछ सतर्क हो ए। कुर्सी खींच, बहुत कायदे के साथ उसपर जयंती को बैठाकर, पनी कुर्सी पर बैठते हुए राजेन्द्र ने एक नज़र हॉल में बैठे व्यक्तियों र डाली और तब आहिस्ता से बोला, "अगर आप बुरा न मानें तो मैं आपसे यह बात कहने का अधिकार चाहूंगा कि इस हॉल में स समय सबसे सुन्दर युवती यदि कोई है तो वह आप हैं...और आपके ाथ होने की वजह से इस नाचीज़ को भी ख्वामखाह की इज़्ज़त मल रही है...ज़रा उधर देखिए, काउंटर से बाईं ओर की छोटी मेज़ पर उस बूढ़े आदमी के साथ बैठी उसकी दोनों युवा कन्याएं कितने प्यार और कितनी हसरत के साथ मेरी तरफ देख रही हैं जैसे मैं कोई फिल्म-स्टार हूं और बम्बई से सीधा यहां इण्डियाना ही आ गया हूं...और यह सच मानिए आप कि अगर मैं आपके साथ न होकर अकेला होता, तो मैं लाख अपना गला साफ करता, प्लेट या गिलास फर्श पर गिराता या खांसने लगता और पांच-सात मिनट लगातार खांसता ही चला जाता, तब भी भारत की ये देवियां मेरी तरफ, देखना तो दूर, नज़रें तक उठाने की तकलीफ गवारा न करतीं।"

जयंती ने मुस्कराते हुए सिर ऊंचा कर देखा। राजेन्द्र की बात सही थी। वे दोनों लड़कियां फिल्मों से प्रभावित होकर ही जैसे अपनी दृष्टियां नचाती-सी राजेन्द्र और जयंती की ओर देख रही थीं। राजेन्द्र ने प्रश्नवाचक दृष्टि से जयंती की ओर देखते हुए पूछा, "कहिए, मैं ठीक था न?"

जयंती हंसी, तब बोली, "हां, आप ठीक हैं; लेकिन यह बड़ा 'अनफेयर' है।"

राजेन्द्र ने चौंककर पूछा, "क्या अनफेयर है?"

जयंती ने हंसकर कहा, "यही—मेरी मौजूदगी का फायदा उठाकर उन गरीब लड़कियों से इस तरह बदला लेना।" फिर हंसकर बोली, "इट इज़ अनशिवेलरस! (यह बात अपुरुषोचित है!)"

राजेन्द्र ज़ोर से हंसा। तब बोला, "आई एग्री (मैं आपसे

हूं) । अच्छा लीजिए, मैं आपकी दया की पात्र उन दोनों
क्यों की ओर से अपनी कुर्सी मोड़, उनकी ओर अपनी पीठ कर
हूं ।" उसने कुर्सी मोड़, उसका रुख दूसरी ओर कर लिया और
ती से पूछा, "अब ठीक है न ?"

हंसते हुए जयंती ने उत्तर दिया, "हां, अब ठीक है। अब सिचुए-
न ज़्यादा संतोषप्रद है !"

इधर-उधर दृष्टि डाल राजेन्द्र ने कहा, "ख़ैर, मेरी कुरसी मुड़वा
आपने लोगों की नज़रों से मेरी रक्षा का प्रवन्ध तो करवा दिया,
मगर आप तो जैसे मोरचे के सामने ही बैठी हुई हैं। सभी आदमी
थोड़े-थोड़े इंटरवल के बाद आपको देख या घूर रहे हैं।"

नमकदानी का ढक्कन ठीक करते हुए जयंती ने धीमे स्वर में
कहा, "अब आपको अन्दाज़ा लग गया कि पुरुषों के अलावा और जो
स संसार में रहती हैं, उन्हें किस तरह इन छोटी-छोटी मुसीबतों के
ीच रहना होता है !"

वेटर के आ जाने और खाने का ऑर्डर लेने से बात वहीं समाप्त
हो गई। वेटर के ऑर्डर लेकर चले जाने के बाद कुछ देर दोनों के
बीच खामोशी रही।

"हां, मुझे एक बात कहनी है," राजेन्द्र ने चौंककर जयंती से
कहा, "आप इसका और कोई मतलब न लगाइएगा। बात यह है कि
हमें शायद कम से कम एक दिन तो आपके घर दिल्ली में बिताना
ही पड़ेगा; और वहां हम एक-दूसरे को 'आप कर लीजिए', 'आप
खा लीजिए' आदि कहकर आदेश देंगे तो बेकार ही आपके घरवाल
को शक होगा। वहां तो हमें बहुत ही बेतकल्लुफी के साथ एक-दूस
को नाम लेकर सम्बोधित करना होगा।...इसलिए मेरी राय से ह
आज से ही—बल्कि अभी से—एक-दूसरे को नाम लेकर बुल
शुरू कर देना चाहिए। यानी मैं आपको जयंती कहूं और आप
सिर्फ़ राजन।...ऐसा करने से हमें इन एक-दो दिनों में ही एक-
नाम लेने की अच्छी-खासी प्रेक्टिस हो जाएगी।...और हां,
'आप' और 'कर लीजिए' भी नहीं चलेगा। इनकी जगह 'तुम'
'कर लो—खा लो' का भी इस्तेमाल अभी से ही शुरू हो

चाहिए···आप मतलब समझ गई हैं न मेरा ?"

जयंती हंसते हुए बोली, "हां, समझ गई हूं। अभी से हम लाग एक-दूसरे को उसके नाम से सम्बोधित करेंगे।···यह लीजिए, मैं उस तरीके से बोलने का सूत्रपात कर देती हूं···" और स्वर में थोड़ी बनावट लाकर उसने कहा, "तुमने अच्छी याद दिलाई राजन ! अब तुम मुझे सिर्फ जयंती कहा करो।"

राजेन्द्र भी हंसने लगा।

खाना खाकर, कॉफी पीते हुए राजेन्द्र और जयंती ने अपने विवाह की सब आवश्यक बातें तय कर लीं। उन लोगों के बीच यह निश्चय हुआ कि अगले दिन वे दोनों कोर्ट में शादी कर लेंगे और कोर्ट से लौटते हुए तारघर जाकर, दिल्ली तार दे देंगे—'हम लोग कल सुबह पहुंच रहे हैं। प्रणाम।···' दिन-भर देहरादून घूमकर रात की गाड़ी से दिल्ली के लिए रवाना हो जाएंगे। परसों सुबह वे लोग दिल्ली में होंगे। दिन-भर दिल्ली रहेंगे। इस बीच जयंती अपने सब परिचितों और सम्बन्धियों से मिल लेगी और अपने चाचाजी से अपने रुपये-पैसों का पचड़ा भी सुलझा लेगी। चाचाजी से सारा हिसाब समझ, वे दोनों उसी रात ट्रेन से देहरादून लौट आएंगे। देहरादून पहुंच यह नाटक समाप्त हो जाएगा। दोनों कलाकार एक-दूसरे से विदा ले अपना रास्ता पकड़ेंगे।

वायदे के अनुसार खाने का बिल राजेन्द्र ने ही चुकाया। वहां से वे लोग तांगा कर 'ग्रीष्म होटल' आए। जयंती को उसके कमरे में छोड़ राजेन्द्र ने उससे विदा मांगी। जयंती ने उससे कुछ क्षण रुकने के लिए कहा और तब सूटकेस से दो सौ रुपये निकाल राजेन्द्र को देती हुई बोली कि कल सुबह आते समय राजेन्द्र अपने साथ दो अच्छी-सी अंगूठियां अवश्य लेता आए। रुपये जेब में रखते हुए राजेन्द्र ने बहुत निश्चितता के साथ स्वीकृतिसूचक सिर हिलाया। गवाहों के विषय में वह जयंती को कॉफी पीते हुए ही बतला चुका था कि उसके दो-तीन इज्ज़तदार और अच्छी पोज़ीशन के दोस्त सहर्ष गवाह बनने के लिए तैयार हो चुके हैं। अब लौटते हुए वह उन्हें फिर पक्का कर लेगा, ताकि वे लोग निश्चित समय पर कोर्ट

में पहुंच जाएं और विवाह के समय उपस्थित रहें।

इसके बाद वह जयंती से विदा ले, सुबह साढ़े दस तक अवश्य पहुंच जाने का वायदा कर, अपने नये जूतों से होटल का बरामदा ठकठकाता हुआ अपने घर चला गया। देर तक जयंती उसके जूतों की आहट, और उसी मीटर पर साथ-साथ प्रसारित हो रही उसकी 'फेड आउट' होती सीटी की गूंज सुनती रही।

अपने कपड़े बदलकर पलंग पर बैठती हुई जयंती, चेहरे पर हलकी-सी मुस्कराहट लिए जैसे अपने-आपसे मन ही मन कहने लगी—आज का दिन कितनी भी दुश्चिंताओं और आशाओं-निराशाओं से भरा हुआ क्यों न रहा हो, आज की रात बहुत ही सुखद, उमंग-भरी और स्वप्नमयी है। इसके सुखद आश्रय में आनेवाले कल और उसकी समस्याओं के बारे में क्यों सोचा जाए?···क्या यही विश्वास काफी नहीं है कि आनेवाला कल आज से कहीं अच्छा और अधिक सुखपूर्ण होगा।···

और आनेवाले कल की प्रतीक्षा में उसे नींद आ गई।
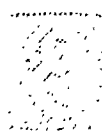
नारायन के सिले उस बढ़िया सूट से अपने को सुशोभित किए हुए निगम साहब राय नौरंगीलाल की प्रतीक्षा में, उनके ड्राइंग-रूम में बैठे अपने उज्ज्वल भविष्य की सुखद कल्पनाओं में लीन थे। राय नौरंगीलाल स्नान कर रहे थे। उनके आदेश के अनुसार रामा निगम साहब को ड्राइंग-रूम में बिठला ही नहीं गया था, बल्कि पांच मिनट बाद एक गिलास में शिकंजवीन और उसके साथ ही अपनी 'सेवा के लिए सदैव तत्पर' मुस्कराहट की एक झलक भी दे गया था। निगम साहब को ये सब लक्षण बहुत ही शुभ और अपने सर्वथा अनुकूल र

रहे थे; और रह-रहकर उनका मन राय नौरंगीलाल के ड्राइंग-रूम तथा जयंती के स्वप्नों को पार करता, उड़ता हुआ 'एस्ट्रॉलॉजिकल मैगज़ीन' के भविष्यवाणी-लेखक और सम्पादक के चरणों पर लोट जाता था। आज जो कुछ होनेवाला है, 'एस्ट्रॉलॉजिकल मैगज़ीन' की कृपा से वह उन्हें बहुत पहले मालूम हो गया था।

राय नौरंगीलाल के आगमन से निगम साहब एक झटके में अपने सपनों के संसार से यथार्थ की कड़ी भूमि पर लौट आए। उनके प्रणाम का उत्तर देते हुए राय नौरंगीलाल ने सोफे पर बैठते हुए कहा, "कहो भई निगम, कैसे हो ? आज तो तुम एक अरसे के बाद दीखे हो।...खैरियत तो है ?"

"सब कृपा है आपकी !" निगम साहब ने दोनों हाथ जोड़ते हुए कहा, "आप तो अच्छी तरह हैं ?"

"ठीक ही हूं। देख लो, तुम्हारे सामने बैठा हुआ हूं—'एज़ फ्रेश एज़ ऐवर !' " राय नौरंगीलाल ज़ोर से हंसे।

निगम साहब भी उनका साथ देने के लिए ज़ोर से हंसे, तब बोले, "वह तो देख ही रहा हूं...बात यह है कि दुनिया में कुछ लोग 'एवरग्रीन' होते हैं...आप उन्हीं लोगों की कैटेगरी में आते हैं। ज़िंदगी के प्रति आपका 'केयर-फ्री एटीट्यूड' (बेफिक्र रवैया) देख कई बार तो मुझे आपसे रश्क होता है !"

"मेरी किस-किस बात को देखकर तुम रश्क करोगे मियां ?" निगम साहब को आड़े हाथों लेते हुए राय नौरंगीलाल ने कहा, "मैं तुम लोगों की तरह ग्लेक्सो मिल्क पर थोड़े ही पला हूं !...ज़िंदगी से जो कुछ मिलना चाहिए था—यानी जिसका मैं हकदार था—वह सब मैंने ज़िंदगी से अपना अधिकार समझकर वसूला है। वह सब जो मुझे मिलना चाहिए था, मिलकर ही रहा....और मिलता कैसे न ! ...मैंने ज़िंदगी से वसूल करने में कोई कोताही नहीं की...अपने को उस चीज़ के योग्य बनाया और उस चीज़ को ज़िंदगी से झटक लिया ...न तुम्हारे ईश्वर के साथ कोई रियायत की और न ईश्वर को ही मौका दिया कि वह मेरे साथ रियायत करे !..."

निगम साहब मंत्रमुग्ध हो राय नौरंगीलाल का लघु भाषण सुन

हे थे। उन्हें ऐसा लगा, जैसे राय नौरंगीलाल ने अपना दृष्टांत कर, अवचेतन मन से उन्हें प्रेरित किया है कि वे भी जिन्दगी से टकर अपना अधिकार लें। इस मामले में, राय नौरंगीलाल की रह, उन्हें भी कोई रियायत नहीं बरतनी चाहिए।

क्षण-मात्र के अन्दर अपने को तैयार कर, राय नौरंगीलाल के चरण-चिह्नों पर गिरते-पड़ते चलने की योजना बनाते हुए निगम साहब ने बहुत तत्परता के साथ राय नौरंगीलाल से कहा, "आपने बहुत ठीक कहा। आपकी एक-एक बात इतनी ज्यादा सही थी कि वह मेरे मन के अन्दर बहुत गहरी गड़ती चली गई है। आपकी बातों को ध्यान से सुनते हुए मैं यही सोच रहा था कि हम लोगों के जीवन में असफल रहने का कारण यही है कि हमारे अंदर वह दृढ़ता, वह मज़बूती, वह आन नहीं है जो हमें इस बात के लिए मजबूर करती रहे कि हमें ज़िंदगी से जो कुछ लेना है उसे हम लेकर ही रहें...यही वजह है कि हम सब—यानी आज के नौजवान—अधूरे, टेढ़-बिढ़ंगे और बुझे हुए ही दीखते हैं। हम लोगों में ज़िंदगी से वसूल करने का हौसला नहीं है।"

राय नौरंगीलाल इस तरह हँसे जैसे निगम साहब का मज़ाक उड़ा रहे हों। तब निगम साहब पर एक भरपूर दृष्टि डालते हुए बोले, "निगम, तुम आदमी समझदार हो!..."

अपनी प्रशंसा से मुदित हो, अपने विचारों को सराहते हुए, निगम साहब कुछ सोचते-से कह रहे थे, "आपकी बात का मुझपर कितना ज्यादा असर पड़ा है, अब मैं अपने मुंह से यह बात कैसे बताऊं!... बस, आप यह समझ लीजिए कि उसने मेरे अन्दर के सोए हुए साहस को जैसे कान पकड़कर जगा दिया है...और यह उस सोए साहस के जागने का ही असर है कि मैं आपसे एक प्रार्थना, एक दरख्वास्त करने जा रहा हूं...और मुझे पूरी उम्मीद है कि आप मेरी प्रार्थना को ठुकराएंगे नहीं, बल्कि उसे सहर्ष स्वीकार करेंगे, क्योंकि अभी आपने ही यह बात कही है कि इंसान के लिए संसार में जो चीज़ बहुत ज़रूरी हो, उसे ज़िंदगी से वह चीज़ वसूल कर लेनी चाहिए..." निगम साहब बहुत साहस के साथ 'नरवस' होते जा रहे थे। उनका स्वर नीचे ही

नीचे गिरता जा रहा था।

राय नौरंगीलाल के अन्दर का उपन्यास-पाठक उनसे कह रहा था—'बस, अब इस कहानी का क्लाइमेक्स आने-ही वाला है···यह जल्दी ही अपने रहस्य का उद्‌घाटन करने जा रहा है···'

प्रकट रूप में उन्होंने कहा, "हां भई, कहो, क्या है तुम्हारी दरख्वास्त?"

निगम साहब ने उंगलियों के नाखूनों में परमानेंटली जमा रहने-वाले मैल को देख, उससे जैसे विरक्त हो अपने पैरों की ओर देखते हुए धीमे से स्वर में कहा, "दरख्वास्त भी क्या है, अब जब उसके बारे में सोचता हूं तो बड़ी शर्म-सी महसूस होती है।···बात यह है जी कि जैसा आप जानते भी होंगे, मेरा और जयंतीदेवी का थोड़ा-बहुत परिचय है और यह परिचय खासा पुराना है···मैं तो जयंतीदेवी की बहुत इज्जत करता हूं और सचाई यह है कि वे मुझे बहुत ही ज़्यादा पसन्द हैं···मेरा ख्याल है कि मैं भी जयंतीदेवी को नापसंद नहीं हूं। ऐसी हालत में मैं अब यह सोचता हूं कि इस मामले को और ज़्यादा न टाला जाए। इसीलिए मैं आपके पास आया हूं, ताकि आप हमें शादी करने की आज्ञा और अपने शुभ आशीर्वाद प्रदान करें। मुझे विश्वास है कि आपको और जयंतीदेवी को मेरे इस प्रस्ताव पर कोई ऐतराज़ न होगा!" बात समाप्त करते हुए उन्होंने महसूस किया कि अब उनकी 'नरवसनैस' दूर होती जा रही है।

लेकिन शीघ्र ही वे एकदम बहुत ज़्यादा 'नरवस' हो गए। उनकी बात सुनकर राय नौरंगीलाल ठठाकर हंस पड़े थे।

हंसी समाप्त कर राय नौरंगीलाल ने कहना आरम्भ किया, "निगम, साहस तो तुम्हारा सचमुच जाग गया है। काश! उसी तरह तुम्हारी समझ भी जाग गई होती, तो तुम्हारे हक में बहुत ही अच्छा होता!···"

खिसियाए स्वर में निगम साहब ने धीरे से कहा, "मैं आपका मतलब नहीं समझा!"

"मतलब यह कि शादी का जो प्रस्ताव तुमने मेरे सामने रखा है," राय नौरंगीलाल ने गम्भीरतापूर्वक कहा, "वह असल में तुम्हें

राजेन्द्र ने छूटते ही कुछ घबराए-से स्वर में प्रश्न किया, "आज भी मुझे देर हो गई ?"

जयंती ने मुस्कराकर उत्तर दिया, "नहीं, आज तुम दो पहले आ गए हो···अभी सिर्फ दस अट्ठाइस ही हुए हैं।"

"ठीक है," राजेन्द्र ने संतोषपूर्वक कहा, "मैं दो मिनट बा इंतज़ार कर लेता हूं।" और अपने हाथ का पैकेट मेज़ पर हं वह कृत्रिम गम्भीरता के साथ कमरे के बाहर चला गया।

जयंती हंसती हुई राजेन्द्र के विचित्र व्यक्तित्व के सम्ब सोचने लगी—घड़ी-भर में बच्चा, घड़ी-भर में नवयुवक, घड़ी- प्रौढ़, घड़ी-भर में उदास व चिंतित और घड़ी-भर में ही हंसने-मुस्व वाला यह पहला ही युवक उसके परिचय-क्षेत्र में आया था·· सचाई यह थी (जयंती ने मन ही मन महसूस किया) कि परेशान मन:स्थिति के बावजूद जयंती राजेन्द्र के व्यक्तित्व के आ की नितांत अवहेलना नहीं कर पाई थी। कहीं न कहीं वह आकर्षित अवश्य हुई थी।

दोबारा दरवाज़ा खटखटाकर, राजेन्द्र नमस्ते करता हुअ सिरे से जयंती के कमरे में आया। जयंती ने देखा कि राजे क्लीन-शेव्ड चेहरा दो-तीन जगह से बुरी तरह कटा हुआ है और आभास दे रहा है जैसे राजेन्द्र ने भूकम्प के झटकों के बीच शेव कं

उसने राजेन्द्र के इन नन्हे ज़ख्मों की ओर उंगली से करते हुए पूछा, "ये कट कैसे गए हैं ?"

राजेन्द्र ने फीकी मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया,'

"नरवसनेस !···"जयंती ने किंचित् आश्चर्य वे "आप किसलिए नरवस हो रहे हैं ?"

राजेन्द्र ने बहुत संजीदगी के साथ उत्तर दि शादी जो हो रही है···झूठ-मूठ की ही सही, लेकि पता नहीं, असली शादी इस ज़िन्दगी में कभी हो शादी के मौके पर जो भी नरवसनेस होती है वह सब आज मुझे हो रही है।"

जयंती ने बड़ी दिलचस्पी के साथ कह

मौके पर यह नरवसनेस सबको होती है ?"

"स्त्रियों के बारे में तो मैं फिलहाल नहीं कह सकता," राजेन्द्र ने बहुत गम्भीरता के साथ कहा, "एक बार स्त्री के रूप में जन्म लेने के बाद ही इस सम्बन्ध में मैं अधिकार के साथ कुछ कह सकूंगा। हां, पुरुषों को, मेरे ख्याल से, इस तरह की घबराहट अवश्य होती है। मैंने नेपोलियन के बारे में कहीं पढ़ा था कि अपनी शादी के दिन महज़ नरवस होने के कारण, उस जैसे बहादुर योद्धा ने शेव करते समय घबराहट में अपना चेहरा कोई पच्चीस-तीस जगह छील डाला था। अपनी शादी के दिन वह जितना लोहू-लुहान हुआ था उतना शायद वह किसी बड़ी से बड़ी लड़ाई में भी नहीं हुआ था···और कारण क्या था—नरवसनेस !"

जयंती खूब हंसी। तब धीरे से बोली, "हां, जब नेपोलियन ने घबराहट में अपना चेहरा काट लिया था तो आप कैसे पीछे रह सकते थे !"

राजेन्द्र मुस्कराने लगा। तब नई बात उठाते हुए बोला, "मेज़ पर ये अंगूठियां रखी हुई हैं। आपने देखी नहीं ?"

जयंती ने बच्चोंवाले चाव के साथ पैकेट खोल डाला और बहुत उत्सुकता के साथ अंगूठियों को देखने लगी। दोनों अंगूठियां सुन्दर और कलापूर्ण थीं। जयन्ती को यह आशा न थी कि राजेन्द्र की पसन्द इतनी निखरी हुई होगी !···अपनी आशा से कहीं अधिक सुन्दर अंगूठियां देख उसे बहुत प्रसन्नता हुई।

अंगूठियां उलट-पुलटकर देखते हुए उन्हें उनके केस में रखती हुई जयंती बोली, "अंगूठियां तो बहुत ही सुन्दर हैं ! आपकी पसन्द की प्रशंसा करनी ही होगी !"

राजेन्द्र ने मुस्कराते हुए धीमे से कहा, "अंगूठियां तो मेरी पसन्द का महज़ एक छोटा-सा ट्रेलर हैं। आप मेरी पसन्द की और ज्यादा बानगियां देखिएगा तब आप महसूस करेंगी कि मेरे टेस्ट तो काबिले-रश्क हैं। अब हम कोर्ट चल ही रहे हैं। वहां आप देखिएगा, आप दुलहिन के रूप में देख मेरे मित्र मेरी पसन्द पर सचमुच ईर्ष्या क[illegible] लगेंगे।"

जयंती और राजेन्द्र दोनों मंद-मंद मुस्कराने लगे।

जैसा राजेन्द्र का ख्याल था, उसके सम्मानित मित्र गवाह के रूप में कोर्ट में मौजूद थे। एडवोकेट मित्र ने एफिडेविट दे दिया था। शायद यही कारण था कि मैजिस्ट्रेट साहब ने विना कोई कानूनी आपत्ति उठाए, शीघ्र ही विवाह की सारी आवश्यक कार्यवाही पूरी कर उन्हें अपनी ओर से वधाई और शुभ कामनाएं दे उन्हें कोर्ट से मुक्ति दे दी। निश्चितता की सांस ले वे दोनों वाहर आए। दोनों उस समय वहुत ही गम्भीर थे। हां, उनके पीछे-पीछे आनेवाले राजेन्द्र के मित्र और इस शादी के गवाह खूव हंस-चहक रहे थे।

एक मित्र ने आगे वढ़ जयंती को प्रणाम किया और वोला, "माफ कीजिएगा भाभीजी, आपको पाकर ये राजेन्द्र अपने तमाम फर्ज़ों को भूल वैठा है; इसीलिए अपना परिचय अपने-आप ही देने की यह गुस्ताखी मुझे करनी पड़ रही है। मेरा नाम मित्तल है—हरीश मित्तल। आपके सुखी विवाहित जीवन के लिए अपनी शुभ कामनाएं देते हुए मैं अपनी ओर से और यहां पर मौजूद अपने इन दोस्तों की ओर से आपको एक तुच्छ-सी भेंट देना चाहता हूं। कृपया इसे स्वीकार कीजिए।"

अपने दायें हाथ का पैकेट उसने वड़ी तत्परता के साथ जयंती के आगे वढ़ा दिया।

धन्यवाद देते हुए जयंती ने उपहार ले लिया और उसे खोलकर देखा—एक प्यारा-सा चीनी मिट्टी का खिलौना था···हाथ से खींचे जानेवाले रिक्शे पर एक महिला वहुत दर्प के साथ छतरी खोले वैठी हुई थी। पुरुष वहुत ही विनम्र भाव से उस रिक्शे को खींच रहा था।

जयंती को वहुत ध्यान के साथ उस सुन्दर खिलौने का निरीक्षण करते देख मित्तल ने वड़ी गम्भीरता के साथ कहा, "यह खिलौना सुखी विवाहित जीवन का प्रतीक है। आप यदि विवाह के वाद सुख पाना चाहती हैं तो इस खिलौने द्वारा प्रस्तुत आदर्श को अपने सामने रखिएगा। राजेन्द्र को आदेश दीजिएगा कि वह जीवन-रूपी गाड़ी को विनम्रतापूर्वक और शांति के साथ खींचे···और हमेशा इस गाड़ी

पर इसी तरह अकड़के साथ सवार रहिएगा। तभी आप जीवन में सुखी रहेंगी!"

मित्रों ने एक ज़ोर का ठहाका लगाया। राजेन्द्र ने भी झेंपते हुए उस हंसी में सहयोग दिया। जयंती लज्जा से लाल हो गई।

नवविवाहितों को अपनी हार्दिक शुभ कामनाएं देकर मित्रगण हंसते-खिलखिलाते हुए विदा हो गए।

एकांत पा, खुलकर सांस लेते हुए, जयंती ने राजेन्द्र से प्रश्न किया, "नाटक का पहला दृश्य हो गया। अब?"

राजेन्द्र ने सोचते हुए उत्तर दिया, "एक ज़रूरी चीज रह गई है, टेलीग्राम···!" फिर चुटकी बजाकर बोला, "हमें यहां से सीधे तारघर जाकर दिल्ली तार दे देना चाहिए कि हम लोगों की शादी हो गई है और हम लोग आज रात की गाड़ी से चलकर कल सुबह दिल्ली पहुंच रहे हैं।"

जयंती ने स्वीकृतिसूचक सिर हिला दिया।
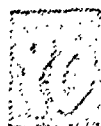
रामा के हाथ से तार लेकर राय नौरंगीलाल ने निर्विकार भाव से उसे खोला और उसकी इबारत को पढ़ने लगे। कुछ क्षण तो वे वैसे ही धीर-गंभीर बने रहे; उसके बाद उनके चेहरे पर जो मुस्कराहट आई वह फैलती ही चली गई।

उनकी ओर उत्सुकता के साथ टकटकी लगाते रामा को देख उन्होंने कहा, "रामा, आज दिन में तुम्हारी जयंती बीबी की शादी हो गई है···जयंती और उनके पति कल सुबह यहां पहुंच रहे हैं।"

प्रसन्नता के कारण रामा का चेहरा चमकने लगा। घर में राय नौरंगीलाल के बाद उसे जयंती का ही स्वभाव पसन्द था; और

यही कारण था कि जयंती की खुशी और सन्तोष के लिए कई वार वह अपनी हद से वाहर जाकर जयंती का काम कर आया करता था और वाद में बहुत शांति के साथ राजेश्वरीदेवी की गर्मा-गर्म डांट-फटकार एक कान से सुन दूसरे से निकाल दिया करता था। इस सारे प्रोसेस में उसके चेहरे पर एक शिकन तक नहीं आती थी। जयंती के विवाह का समाचार सुन उसका दिल वल्लियों उछलने लगा।

उसने मुस्कराते और दोवारा तार पढ़ते हुए राय नौरंगीलाल से कहा, "वीवीजी के वावूजी तो यहां पहली ही वार आएंगे न?··· उनके लिए तो बहुत तैयारी करनी होगी।"

"और क्या!" राय नौरंगीलाल ने नौकर की समझदारी पर प्रसन्न होकर कहा, "नया जंवाई पहली वार अपनी ससुराल आ रहा है, उसके स्वागत की तैयारियां नहीं की जाएंगी! सारा घर नये सिरे से साफ होगा···दीवार पर लटकी हुई तस्वीरें अपनी जगह से हटाकर, झाड़-पोंछकर फिर लटकाई जाएंगी···हर सोफा, मेज़, कुर्सी अपनी जगह से सरकाकर नये सिरे से जमाई जाएगी···सोफों के कवर, मेज़पोश, कुर्सियों की गद्दियों के गिलाफ और दरवाज़ों-खिड़कियों के परदे वदले जाएंगे···और हां, हमने तुम्हारे लिए एक ड्रेस वनवाई थी, वह कहां है?···हमने तुम्हें उसे कभी पहने नहीं देखा···कल सुवह तुम हमें उसी ड्रेस में दीखोगे···समझ गए न?···रसोइये के ९ एप्रन वनवाए गए थे···कम्वख्त ने आज तक तो पहने नहीं··· कह देना कि कल अगर वह पानी भी गरम करे तो एप्रन पहनकर करे।···खैर, तुम रसोइये को मेरे पास भिजवा दो।"

राय नौरंगीलाल एक क्षण के लिए रुके, तव वोले, "और हां, यह जो तुम्हारी आदत है न कि काम सुनकर घण्टे-भर के लिए उसे भूल गए और घण्टे-भर वाद अचानक काम का ध्यान आने पर बौखलाहट में इधर-उधर दौड़ने लगे, इस आदत को तुम्हें कम से कम एक हफ्ते के लिए छोड़ना होगा···अगर तुमने अपनी यह आदत नहीं छोड़ी तो समझ लो, तुम, वंगले के वाहर जो फुटपाथ है न, वहां टहलते दीखोगे···वस, अव जाओ, और देखो, रसोइये को मेरे पास भिजवाना।

मत भूलना।"

अच्छी तरह सिर हिलाकर 'जी हां' कह रामा रसोई की ओर बढ़ गया। राय नौरंगीलाल की इन धमकियों में कितना सार है, वह यह वखूवी जानता था।

कुछ ध्यान आने पर राय नौरंगीलाल अपनी धर्मपत्नी के कमरे की ओर वढ़े। वाहर से ही उन्होंने आवाज़ दी, "भई सुनती हो!... तार आया है...जयंती और उसका पति कल सुवह आ रहे हैं।"

राजेश्वरीदेवी, कॉपी सामने रख, धोवी के लाए कपड़े अपनी सूची से मिला रही थीं। अपने पति की प्रसन्नता देख उन्हें एक हलका-सा आघात पहुंचा; लेकिन शीघ्र ही उस आघात से मुक्त होने की कोशिश करते हुए उन्होंने कहा, "चलो, अच्छा हुआ। शादी हो गई। हम करते तव भी वही वात थी। उसने खुद कर ली, वह और भी अच्छा हुआ। अव आगे उसे हमसे कोई शिकायत करने का मौका तो नहीं मिलेगा। भगवान करे, उसका सुहाग वना रहे और वे हमेशा खुश रहें!" अपने आंचल से उन्होंने अपनी आंखों के उन आंसुओं को पोंछ डाला जो न उनकी आंखों में आए थे, और न ही जिनके वाहर आने की सम्भावना थी।

राय नौरंगीलाल अपनी पत्नी के अभिनय से प्रभावित होकर वोले, "तुम ठीक कहती हो...हम लोग भी अव एक वहुत वड़ी जिम्मे-दारी से मुक्त हो गए हैं...कल वे लोग आ रहे हैं...एकाव हफ्ते वाद अपने घर चले जाएंगे और तव जयन्ती भी हमारे लिए ऐसी ही हो जाएगी जैसे लल्ली और छोटी...मैं वस अव यही चाहता हूं कि जितने दिन जयन्ती और उसका पति यहां रहें, तुम उनकी खातिर-दारी में कोई कोर-कसर न रखो। उनकी ऐसी वढ़िया खातिर करो कि जयन्ती का पति उम्र-भर तुम्हारा ऐहसान माने और तुम्हारी इज़्ज़त करे...उसे तो यही लगना चाहिए कि घर का हरेक आदमी उसके घर में आने पर वहुत प्रसन्न है और जी खोल उसकी खातिर कर रहा है...और यह वात इतनी मुश्किल भी नहीं है—आखि[illegible]
छः दिन की ही तो वात है।"

राजेश्वरीदेवी को जीवन में पहली बा[illegible]

ही लगी और उन्हें उसमें कुछ सार दीखा। सोचती हुई वोलीं, जैसा तुम कहते हो, वैसा ही होगा। मैं कोई तुमसे वाहर थोड़े ही ।"

राय नौरंगीलाल कुछ कहने ही जा रहे थे कि वाहर से रसोइये की आवाज़ सुनाई दी, "वावूजी !"

"अन्दर आ जाओ !" राय नौरंगीलाल ने रसोइये को आदेश दिया।

रसोइये के अन्दर आने पर, अपनी पत्नी की महत्ता को महसूस करते हुए और अपनी पत्नी को भी यह दिखलाते हुए कि मैं तुम्हारी महत्ता को महसूस करता हूं, राय नौरंगीलाल ने वाहर जाते हुए, चुपचाप खड़े रसोइये से केवल इतना ही कहा, "कल सुवह से नाश्ते और खाने पर क्या-क्या वनेगा, यह सव अपनी मांजी से पूछ लो··· जो कुछ वे कहें, वही वनेगा—एक चीज़ इधर-उधर नहीं होगी··· समझ गए न ?···" तार के फार्म की तह करते हुए वे दरवाज़े तक पहुंच गए।

दरवाज़े पर वे मुड़े और राजेश्वरीदेवी से वोले, "तुम लल्ली और छोटी को खवर दे देना। मैं पुष्पा को सूचना दे देता हूं। सुवह से तीन-चार वार उसका फोन आ चुका है।"

दरवाज़े के वाहर पहुंच, वे एक वार फिर घूमे। इस वार वाहर से ही शुतुरमुर्ग की तरह अपनी गरदन कमरे के अन्दर पहुंचा उन्होंने रसोइये की ओर इशारा कर अपनी पत्नी से कहा, "हां, इससे कह देना, कल यह एप्रन में दीखे।"

कम वोलनेवाले उस गढ़वाली रसोइये को अपनी ज़्यादा वोलनेवाली पत्नी के भाग्य पर छोड़ राय नौरंगीलाल टेलीफोन का रिसीवर हाथ में ले पुष्पा का नम्वर मिलाने लगे।

पुष्पा घर पर ही थी और जयन्ती के सम्वन्ध की सूचना की प्रतीक्षा कर रही थी। राय नौरंगीलाल से जयन्ती के विवाह और दिल्ली-आगमन के विषय में सुन वह वहुत ही प्रसन्न हुई। राय नौरंगीलाल को वधाई और धन्यवाद दे उसने रिसीवर नीचे रख दिया और मन ही मन कहने लगी, 'चुड़ैल ने मुझे इन्फार्म करने की जरूरत

तक नहीं समझी ! ···अच्छा, आने दो उसे और उसके पति महोदय को···यहां सुलझ लूंगी उनसे···इस समय तो वे लोग शायद ट्रेन में होंगे ! ···'

काफी देर तक खिड़की से बाहर झांकते रहने के बाद, लौटकर अपनी बर्थ तक आते हुए राजेन्द्र ने एक लम्बी निश्चित सांस ली और अपनी ओर देखती हुई जयंती से कहा, "लो, देहरादून स्टेशन तो मीलों पीछे छूट गया ···"

जयंती मुस्कराने लगी ।

कुछ ध्यान-सा आने पर अचानक राजेन्द्र ने जयंती से कहा, "अरे हां, तुमने मुझे दुनिया-जहान की बातें तो बता डालीं, मगर यह नहीं बताया कि घर पर कौन-कौन होंगे ?"

जयंती के चेहरे पर हलकी-सी हंसी आ गई । बोली, "यह तुमने अच्छी याद दिलाई···मैं तो बिलकुल ही भूल गई थी । देखो, घर पर चाचाजी होंगे और चाचीजी होंगी···और होंगी मेरी दोनों छोटी बहिनें—लल्ली और छोटी—और उनके बच्चे, जिनके सही नाम मुझे नहीं मालूम···उनके पति तो दफ्तर होंगे और शायद शाम को तुमसे मिलने आएं···"

बात काट जयंती को रोकता हुआ राजेन्द्र बोला, "ठहरो, ठहरो, पहले मुझे तुम्हारी बहिनों के नाम तो याद कर लेने दो···क्या नाम बताए थे तुमने ?···लच्छी और छोटी ! ···"

जयंती हंसने लगी । तब बोली, "लच्छी और छोटी नहीं मिस्टर, लल्ली और छोटी ! ···इन नामों को रट लो···लल्ली और छोटी··· और हां, मेरी चंचल और दुष्ट सहेली पुष्पा होगी, जिसने मुझे इस मुसीबत में फंसवाया था···और दो नौकर भी होंगे—ऊपर का काम करनेवाला रामा, और रसोइया चन्दरसिंह !···और विश्वास करो, सिवाय चाचीजी के, सबके सब तुमसे मिलने के लिए [illegible] होंगे ।"

राजेन्द्र का मुंह सूख गया । [illegible] "तब तो बड़ी दिक्कत होगी । [illegible]

एक वैट्समैन !...कहीं किसीने पैंतरा बदल कोई आड़ी-टेढ़ी गेंद फेंक दी तो मैं तो फील्ड के बाहर ही दीखूंगा। खैर...अब जब ओखली में सिर दे ही दिया है तो मूसलों से क्या डर !...मैं तो अपना पार्ट अच्छी ही तरह से करने की कोशिश करूंगा। यह बताओ, कोई वहां मुझपर वेकार शक करनेवाला तो नहीं होगा ?..."

"नहीं, नहीं, शक-वक करनेवाला कोई नहीं है," जयंती ने राजेन्द्र का साहस बंधाते हुए कहा, "चाचाजी उपन्यास बहुत पढ़ते हैं इस-लिए वे शायद कई तरह के अनुमान लगाएं ; मगर क्योंकि उन्हें मुझपर पूरा विश्वास है, वे अपने अनुमान अपने ही मन में रख, जो कुछ मैं उन्हें कहूंगी, उसीको सच मानेंगे।"

"तब ठीक है," राजेन्द्र ने कुछ सन्तोष के साथ कहा, "हर कदम पर मुझे कोई क्रॉस-क्वश्चन करनेवाला नहीं होगा, तो मुझे अपना पार्ट करने में ज़्यादा दिक्कत नहीं होगी।"

"ऐसी कोई कठिनाई तुम्हारे सामने नहीं आएगी !" जयंती ने राजेन्द्र को आश्वासन देते हुए कहा, "हमारे घर में कोई भी चीज़ अगर तुम्हें नागवार गुज़र सकती है तो वह चाचीजी का व्यवहार ; उसके अलावा और कोई दूसरी चीज़ नहीं। बात यह है कि चाचीजी मुझसे नाराज़ रहती हैं...इस कारण वे शायद तुमसे भी मुंह फुलाए हुए रहेंगी और तुम्हारे आने पर कोई विशेष उत्साह नहीं प्रकट करेंगी। उनके अलावा घर के सब लोग बड़े तपाक से तुम्हारा 'रिसेप्शन' करेंगे।"

राजेन्द्र का मन इस समय बड़ा हलका हो गया था। मुस्कराते हुए उसने पूछा, "ज़बानी रिसेप्शन होगा या कुछ फूलमालाएं इत्यादि भी होंगी ?"

जयंती ने भी मुस्कराते हुए उत्तर दिया, "फूलमालाएं भी होंगी और 'इत्यादि' भी होंगी। तुम उस ओर से बेफिक्र रहो। बस, अपने को चाचीजीवाले फ्रंट के लिए तैयार कर लो।"

"चाचीजी की ओर से ही मैं बेफिक्र हूं," राजेन्द्र बोला, "तुम उनकी चिन्ता न करो। उन्हें तो मैं मिनटों में मोम कर लूंगा।" उसने चुटकी बजाई और बोला, "इस तरह। तुम देख लेना।"

हाथ रखना पड़े तो तुम बुरा मान इस तरह मुंह तो नहीं बनाओगी जैसे सवर्ण, अवर्ण के स्पर्श पर बनाते हैं ?···या इस तरह अपने को तो नहीं सिकोड़ोगी जैसे पानी से नॉन-सेन्फोराइज्ड कपड़ा सिकुड़ता है ?···एकांत में तो मैं तुम्हें छूऊंगा भी नहीं, किन्तु चार आदमियों के सामने अगर ऐसी स्थिति आ जाए तो मुझे अधिकार है न कि मैं ···तुम्हें···मेरा मतलब है···"

लज्जा से लाल पड़ती हुई जयंती ने साड़ी से मुंह ढकते हुए, बात को किसी तरह समाप्त करने की दृष्टि से कहा, "हां, हां··· इसके लिए इतनी लम्बी भूमिका की क्या ज़रूरत है ! जब जैसा ठीक हो, वैसा ही करना ।"

राजेन्द्र के चेहरे पर शरारत-भरी मुस्कराहट आ गई । सिर झुकाकर बोला, "इस तरह घुमा-फिराकर अधिकार देने के लिए धन्यवाद । मगर देखिए, ऐन मौके पर 'नरवस' न हो जाइएगा । कहीं मेरी सारी सतर्कता और सावधानी बेकार हो जाए ।"

जयंती ने साड़ी से ही मुंह ढके अपना सिर हिलाया ; कहा कुछ नहीं ।

राजेन्द्र ने कहा, "आपके इस तरह सिर हिलाने का मतलब है —आप नरवस नहीं होंगी !"

जयंती राजेन्द्र को देखती हुई यही सोचने लगी थी—यह व्यक्ति बचपन और युवावस्था का कितना अद्भुत और आकर्षक सम्मिश्रण है ।···घड़ी में यह छाया से घिर उठता है और घड़ी में यह प्रकाश से आलोकित हो उठता है ।···और अपने दोनों ही रूपों में यह सुंदर और सुदर्शन है ।···

विचारधारा में बहती जयंती की मनोहर छवि को अपलक देखते हुए राजेन्द्र भी ऐसा ही कुछ सोच रहा था । जयंती के अचकचाकर एकाएक संभल बैठने पर उसने भी अपनी पलक झपकाई और लजाती हुई जयंती की ओर देखता हुआ बोला, "न्याय-व्यवस्था में ऐसा भी कोई विधान होना चाहिए कि मनुष्य को कई बार केवल इसीलिए दंडित किया जाए कि उस समय वह जो कुछ सोच रहा था वह इस योग्य था कि पुलिस उस विचार के कारण ही उस व्यक्ति को गिरफ्तार कर सके !"

एक क्षण रुक, जयंती के यह आभास देने पर कि वह उसकी बात अच्छी तरह नहीं समझ पाई है, उसने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, "मुझे पता नहीं, थोड़ी देर पहले आप क्या सोच रही थीं···और जो कुछ आप सोच रही थीं वह न्याय की दृष्टि से अवैधानिक था या नहीं ?···मगर मैं जो कुछ सोच रहा था उसे यदि मैं न्याय-व्यवस्था के सामने प्रकट कर दूं तो सचमुच मुझे गिरफ्तार कर लिया जाए और 'ताज़ीराते हिन्द' की एकाध दफा मुझपर फौरन लागू कर दी जाए।"

मुस्कराहट रोकने की बहुत कोशिश करने पर भी उसके चेहरे पर मुस्कराहट आ ही गई।

लज्जा से बिलकुल सिंदूर होती हुई जयंती ने कृत्रिम गम्भीरता को अपने ऊपर ओढ़ने की असफल चेष्टा करते हुए कहा, "तो आपने अभी से ओवर-एक्टिंग शुरू कर दी है !"

राजेन्द्र ने खड़े होते हुए कहा, "यह ओवर-एक्टिंग है !···तब फिर मुझे आपसे कुछ नहीं कहना है। वैसे भी, कहने के लिए अब कुछ रह भी नहीं गया है। अच्छा, मैं सोने जा रहा हूं। गुड नाइट !···" और वह अपनी बर्थ पर चला गया।

जयंती देर तक उसे देख मुस्कराती और लजाती रही।

हमेशा की तरह दिल्ली जंकशन पर खासी भीड़ थी। लगभग सभी प्लेटफार्मों पर गाड़ियां और उनसे सम्बद्ध भीड़ असमान रूप से चकत्तों की तरह फैली हुई थी। जमुना-पुल के आने से पहले ही राजेन्द्र और जयंती अपने होल्डाल पैक कर खिड़कियों के पास आ बैठे थे। प्लेटफार्म के शुरू होते ही उल्लास और उत्सुकता के साथ

जयंती ने राजेन्द्र की ओर देखा और उसे बहुत आश्चर्य हुआ जब उसने पाया कि राजेन्द्र के होंठ हिल रहे हैं। उसने कुछ व्यग्रता के साथ प्रश्न किया, "तबियत तो ठीक है न ?...क्या ठण्ड लग रही है ?"

राजेन्द्र ने बहुत शांति के साथ उत्तर दिया, "तबियत भी ठीक है और ठंड भी नहीं लग रही है। मैं तो हनुमान चालीसा का पाठ कर रहा हूं।"

हंसते हुए जयंती ने अपनी दृष्टि बाहर फेर ली।

एक झटके के साथ गाड़ी रुक गई। दो कुली फुर्ती से डिब्बे में घुस आए और राजेन्द्र के इशारा करने पर बड़ी मुस्तैदी से उनका सामान उठाने लगे।

वे दोनों कम्पार्टमेंट के बाहर निकले ही थे कि जयंती के सम्बन्धियों की उस छोटी-सी भीड़ ने उन्हें घेर लिया। लल्ली और छोटी हंसती-खिलखिलाती और रोती जयंती से चिपट गईं और देर तक चिपटी ही रहीं। इस बीच राजेन्द्र ने अपनी बुद्धि का इस्तेमाल कर साथ खड़े रोबीले वृद्ध पुरुष के चरण छू 'चाचाजी, नमस्ते' कह उन्हें प्रणाम किया। राय नौरंगीलाल गद्गद हो उठे। दोनों हाथों से राजेन्द्र को ऊपर उठाते हुए उन्होंने उसे अपने सीने से लगा लिया। उनके मुंह से अस्फुट स्वर में निकला, "खुश रहो बेटा। तुम दोनों की जोड़ी बनी रहे।"

इस तरह प्लेटफार्म पर उस जगह गले मिलती दो जोड़ियां बन गईं—जयंती और उसकी बहिनें; और राजेन्द्र और राय नौरंगीलाल।...केवल पुष्पा अकेली भौचक-सी खड़ी, आंखें फाड़ राजेन्द्र को देखती हुई यही सोच रही थी कि क्या किसी आदमी की तस्वीर और उसकी शकल में इतना ज़बर्दस्त अंतर होता है ?...या फिर जयंती सुशील के धोखे में इस जन्तु को घेर लाई है ?...

लल्ली और छोटी के पाश से मुक्त हो जयंती राय नौरंगीलाल की ओर मुड़ी। उनके चरण छू, उनसे 'सदा सुखी और सौभाग्यवती' रहने का आशीर्वाद पाकर, वह अन्त में अपने समस्त हार्दिक उल्लास के साथ, आश्चर्य के कारण मुंह फाड़े खड़ी पुष्पा के गले से लिपट गई।

लल्ली और छोटी ने अपने खुशी के आंसू पोंछते हुए, मुस्कराकर अपने नये जीजाजी को नमस्ते की और अपना नाम वता उन्हें अपना परिचित बना लिया।

सामान लिए कुलियों की ओर देख राय नौरंगीलाल ने राजेन्द्र से कहा, "वेटा, शादी करके आ रहे हो और सामान पास में कुल इतना ही है?"

राजेन्द्र ने अपने छोटे-से होल्डाल और छोटी-सी अटैची की ओर देखकर, कान का ऊपरी हिस्सा खुजलाते हुए कहा, "मेरे खयाल से चाचाजी, सामान तो ज़्यादा ही है...वात यह है न, मैं लखनऊ में पढ़ा हूं। सफर में सामान ले जाते वक्त मैं अक्सर लखनऊ का ही दस्तूर निभाता हूं।"

कुछ उत्सुकता से राय नौरंगीलाल ने प्रश्न किया, "भई, यह लखनऊ का दस्तूर क्या है?"

"जी, वह एक छोटी-सी मनोरंजक कहानी है।" राजेन्द्र ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया, "मैं रास्ते में आपको सुना दूंगा। मेरे खयाल से, प्लेटफार्म पर जो 'फंक्शन' होना था, वह तो हो गया है, अव यहां से चलना चाहिए। कुली भी वेकार ही वोर हो रहे होंगे।"

"हां, हां; ज़रूर, ज़रूर!" राय नौरंगीलाल ने जैसे सावधान होकर कहा, "यहां से तो चलना ही चाहिए। वातों के लिए तो सारा दिन पड़ा है...आओ जयंती...चलो पुष्पा..." और तव वहुत स्नेह के साथ राजेन्द्र के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, "चलो वेटा!"

राजेन्द्र ठिठक गया और दायां हाथ आगे कर वोला, "जी नहीं, पहले आप!...हमारा फर्ज़ तो आपके पीछे चलना है...वैसे भी लखनऊ की 'पहले आप' वाली सभ्यता का तकाज़ा है कि पहले आप ही आगे चलें!"

राय नौरंगीलाल ने मुक्त कंठ से एक जोर का ठहाका लगाया। चाय की ट्रे हाथ में लिए जा रहे एक वेटर के हाथ से चाय की ट्रे छूट- [illegible] और नीचे गिरती-गिरती वची; और एक टिकट-चेकर [illegible] 'विना टिकट' साहव की रसीद काटना भूल राय नौरंगीलाल का चेहरा देखने लगा।

लल्ली, छोटी और राजेन्द्र भी हंसने लगे थे। हंसते-हंसते ही वे लोग कुलियों के साथ मेन एण्ट्रेन्स की ओर बढ़ने लगे।

इस ठहाके के बीच जयंती धीरे से पुष्पा के कान में फुसफुसाई, "ये सुशील नहीं हैं। वहां मेरे साथ एक बड़ी ही विचित्र घटना घटी। तुझे सब कुछ विस्तार से बताऊंगी। इन साहब का नाम राजेन्द्र है! बाकी फिर!"

जयंती और पुष्पा एक टैक्सी में सवार हुईं और दूसरी में बाकी सब लोग। टैक्सी चलते ही राय नौरंगीलाल ने राजेन्द्र से कहा, "हां बेटा, अब बताओ, लखनऊ का दस्तूर क्या है?"

राजेन्द्र के चेहरे की मुस्कराहट फैल गई; बोला, "विक्टोरिया टर्मिनस आनेवाली पंजाब मेल में एक डिब्बा लखनऊवाला भी होता है। यह डिब्बा लखनऊ से चलकर झांसी पहुंचता है और झांसी से पंजाब मेल में जोड़ दिया जाता है। लखनऊ से डायरेक्ट बम्बई जाने-वाले प्रायः इसीसे सफर करते हैं, यह तो आप जानते ही होंगे।"

राय नौरंगीलाल के स्वीकृतिसूचक सिर हिलाने पर राजेन्द्र ने गति पकड़ते हुए कहा, "एक बार पंजाब मेल के बम्बई वी० टी० पहुंचते ही, लखनऊवाले डिब्बे में से एक लखनउवा साहब तपाक से बाहर निकले और कुली को आवाज़ देने लगे। एक हमाल—यानी कुली —लपकता हुआ आया। उन्होंने कुली को सामान बाहर निकाल लाने का हुक्म दिया। कुली अन्दर जो पहुंचा तो हैरत में रह गया। एक बर्थ पर एक साहब बैठे बहुत इतमीनान के साथ अपनी अचकन के बटन दुरुस्त कर रहे थे और दूसरी बर्थ पर एक छड़ी पड़ी हुई थी। इसके अलावा पूरे डिब्बे में कहीं कोई सामान न था। अचकचाकर हमाल बाहर निकल आया और लखनउवा साहब से पूछने लगा कि सामान किधर है। इसपर नवाब साहब बड़े बिगड़े—मियां, आंखें हैं या प्लास्टिक के बटन, जो बर्थ पर आराम फरमाती इतनी लम्बी छड़ी आपको नज़र नहीं आ रही है। उसे उठा लाइए…वही हमारा सामान है…हम लखनऊवाले इतना ही सामान साथ लेकर चलते हैं …घर की नींव तक उखाड़कर सफर में साथ ले चलना लखनऊ का दस्तूर नहीं है मियां…समझे कुछ?"

राय नौरंगीलाल हंसते-हंसते लोट-पोट हो गए। लल्ली और छोटी हंसती हुई एक-दूसरी पर गिरी जा रही थीं।

राजेन्द्र कुछ देर उन लोगों को हंसते हुए देखता रहा, तब बहुत गम्भीरता के साथ बोला, "लेकिन चाचाजी, कहानी अभी खतम कहां हुई है! ... इससे आगे भी तो सुनिए।"

राय नौरंगीलाल अपनी हंसी रोक उत्सुकता के साथ राजेन्द्र की ओर देखने लगे। कोशिश करने पर भी लल्ली और छोटी की हंसी नहीं रुक सकी। उनकी खिलखिलाहट के बीच ही राजेन्द्र ने आगे कहना आरम्भ किया, "खैर साहब, हमाल लखनउवा साहब की छड़ी बहुत इज़्ज़त के साथ डिब्बे के बाहर निकाल लाया। लखनउवा साहब के भाषण से आकर्षित हो एक दूसरा हमाल भी उस जगह खड़ा हो गया था और यह तमाशा देखता हुआ मुस्करा रहा था। पहले नवाब साहब के आगे बढ़ते ही दूसरे नवाब साहब ने, जो अब तक अपनी अंचकन के बटन दुरुस्त कर चुके थे, खिड़की में से बाहर झांक इस दूसरे हमाल से कहा, 'क्यों मियां, खाली हो? तो फिर दीदे फाड़े क्यों खड़े हो? अन्दर आओ और हमारा सामान उठा लाओ।' बात खतम कर छोटे नवाब साहब बाहर आ लिए। कुली अन्दर पहुंचा तो अचरज से उसकी आंखें बाहर निकल आईं और उसकी बोलती बन्द हो गई—बर्थ पर, सामान की शक्ल में, सिर्फ दियासलाई की एक डिब्बी रखी हुई थी।"

इस बार राय नौरंगीलाल ने इतने ज़ोर का ठहाका लगाया कि टैक्सी चलानेवाले सरदारजी ने गाड़ी धीमी कर दी और बिना कुछ बोले राय नौरंगीलाल और एक-दूसरे पर गिरती लल्ली और छोटी की ओर वक्र दृष्टि से देखने लगा। उन लोगों की हंसी कम होने पर ही सरदारजी ने गाड़ी की स्पीड बढ़ाई।

हंसी समाप्त करते हुए राय नौरंगीलाल ने राजेन्द्र से कहा, "खूब भाई, खूब! ...अब हमें भी लखनऊ का दस्तूर मालूम हो गया। लल्ली, छोटी, तुम लोग भी अब जब सफर पर जाओ तो लखनऊ के दस्तूर को न भूलना।"

"ज़रूर!" हंसती हुई लल्ली ने कहा; फिर राजेन्द्र की ओर

देख बहुत सरल भाव से बोली, "जीजाजी, आप बहुत ही मज़ेदार व्यक्ति हैं।"

राजेन्द्र झेंपने का नाट्य करता हुआ सिर झुकाकर मुस्कराने लगा।

बंगले पर पहुंचते-पहुंचते उसकी झेंप बिलकुल दूर हो चुकी थी। ड्राइंग-रूम में घुसते ही उसने घूमकर जयंती की ओर देखा और ज़ोर से बोला, "जयंती, चाचीजी नहीं दीख रही हैं...कहां होंगी वे इस समय ?"

जयंती के उत्तर देने से पहले ही राय नौरंगीलाल ने आगे बढ़ धीमे स्वर में कहा, "वे अपने कमरे में आराम कर रही हैं बेटा। आज सुबह ही से उनकी तबियत कुछ खराब है। पेट में हलका-हलका दर्द बता रही हैं।"

"ओह !..." राजेन्द्र ने चिंतातुर स्वर में कहा, "तब तो मुझे उनसे अवश्य मिलना चाहिए। उनका कमरा कौन-सा है, आप ज़रा बतला देंगे ?"

राजेन्द्र की व्यग्रता देख राय नौरंगीलाल बोले, "हां, हां, मेरे साथ आओ। मैं ले चलता हूं तुम्हें उनके पास।" और वे दोनों राजेश्वरीदेवी के कमरे की ओर बढ़ने लगे।

अपने कमरे के दरवाज़े के परदे में से झांककर राजेश्वरीदेवी सब कुछ देख-सुन रही थीं। राय नौरंगीलाल के साथ राजेन्द्र को अपने कमरे की ओर आते देख, वे घबराकर अपने पलंग की ओर भागीं और शीघ्रता के साथ अपनी मोटी रज़ाई के अन्दर दुबक गईं। इस क्रिया में उनकी सांस फूल गई, उनके माथे पर पसीना झलक आया और वे सचमुच बीमार दीखने लगीं।

राय नौरंगीलाल ने दरवाज़े से ही आवाज़ लगाई, "भई सुनती हो, ये नये जंवाई बाबू तुमसे मिलने आए हैं।" फिर राजेन्द्र से बोले, "अन्दर आओ बेटा, तुम बाहर ही क्यों खड़े रह गए ?"

राजेन्द्र ने कमरे के एक कोने में पूजा का स्थान और पूजा का सामान देखा। अपनी समझ के अनुसार उसे अपने जूते बाहर उतार देने ही उचित प्रतीत हुए। जूते उतार वह बहुत अदब के साथ कमरे

के अन्दर दाखिल हुआ। वहुत श्रद्धा के साथ उसने पलंग पर लेटी, कराहती हुई राजेश्वरीदेवी के चरण छूकर उन्हें प्रणाम किया; उन्हें अपना नाम वताया और साथ ही उन्हें यह भी वता दिया कि उन्हें देख आज इतने लम्बे अरसे वाद उसे अचानक ही अपनी स्वर्गीया माताजी की याद हो आई है।

उसके वाद वह मुग्ध भाव से खड़े राय नौरंगीलाल की ओर मुड़ा और वोला, "चाचाजी, घर में अमृतधारा तो होगी ही। ज़रा मंगवा दीजिए और देखिए, साथ में एक-दो वताशे भी मंगवा दीजिए।"

"हां, हां, अभी लो।" कह राय नौरंगीलाल वड़ी तत्परता से वाहर जाने लगे। राजेश्वरीदेवी ने हाथ उठा उन्हें रोकने की कोशिश की और वोलीं, "रहने दो अमृतधारा इस समय। ऐसे ही ठीक हो जाएगा।"

"अमृतधारा लेने में कोई हर्ज नहीं है चाचीजी!" राजेन्द्र ने वहुत स्नेह के साथ कहा, "उससे मिनटों में आराम हो जाएगा।"

राजेश्वरीदेवी को विरोध न करते देख, राय नौरंगीलाल मुस्कराते हुए कमरे के वाहर चले गए। राजेन्द्र एक मूढ़ा खींच पलंग के पास वैठ गया और वहुत संयत भाव से धार्मिक विषयों तथा त्यौहारों और अनुष्ठानों के वारे में राजेश्वरीदेवी से वात करने लगा। अमृतधारा आ जाने पर, राजेश्वरीदेवी को वताशे में दो वूंद पिलवा, उन्हें मुकम्मिल आराम करने का स्नेह-भरा संदेश देकर ही वह उनके पास से हटा।

राजेश्वरीदेवी के कमरे से वाहर निकलते ही उसकी रामा से मुठभेड़ हुई। रामा ने छूटते ही राजेन्द्र को एक दनदनाता मिलिट्री सैल्यूट दागा और तव वहुत इज्ज़त के साथ वोला, "सरकार, वीवीजी के हुक्म से आपके शेव करने का प्रवंध कर दिया है। ड्राइंग-रूम में सारी चीज़ें रख दी हैं। और किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो हुक्म दीजिए।"

राजेन्द्र ने रामा को सिर से पैर तक देखा और सिर हिलाकर वोला, "शावाश!...तुम तो वहुत काम के आदमी हो भाई। क्या

नाम है तुम्हारा ?"

"सरकार, जब मैंने स्कूल छोड़ा था, तो मेरा नाम रामप्रसाद आर्य था ; अब तो वह घिसते-घिसते रामा हो गया है। आप भी मुझे रामा कहकर पुकारिएगा। जब भी किसी चीज़ की ज़रूरत हो, एक आवाज़ दीजिएगा, मैं सिर के बल दौड़ा चला आऊंगा।"

"नहीं, सिर के बल आने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।" राजेन्द्र ने मुस्कराते हुए कहा, "तुम आवाज़ लगने के पांच-दस मिनट के अन्दर अगर पैरों से चलकर भी आ गए तो मैं तुम्हारा बड़ा अहसान मानूंगा। समझ गए न ?..."

रामा ने झेंप-भरी मुस्कराहट के साथ कहा, "सरकार तो शर-मिन्दा करते हैं।...आइए, बड़े बाबूजी आपका इंतज़ार कर रहे होंगे।" सावधानी से बात को दूसरी ओर पलटकर वह राजेन्द्र को अपने साथ ड्राइंग-रूम में ले आया।

राजेन्द्र को देख राय नौरंगीलाल अखबार हाथ में लिए ही उठ-कर खड़े हो गए। उन्हें दोनों हाथों से पकड़कर ज़बर्दस्ती सोफे पर बिठलाते हुए राजेन्द्र ने कहा, "आप बैठिए न ! इस तरह खड़े क्यों हो गए ?...आपके मुझे इस तरह इज़्ज़त देने से मुझे बहुत ही ज़्यादा संकोच होता है।"

राय नौरंगीलाल बिना कुछ बोले धीरे से सोफे पर बैठ गए और प्रशंसा-भरी दृष्टि से राजेन्द्र को देखने लगे।

एक कुरसी खींच राजेन्द्र भी निकट ही बैठ गया और आइने में अपनी ठोड़ी देखता हुआ रेज़र में ब्लेड लगाने में व्यस्त हो गया।

कुछ सोचते हुए राय नौरंगीलाल ने गद्गद स्वर में कहा, "बेटा, तुम्हें देखकर तो चित्त सचमुच ही प्रसन्न हो गया। रियल सेन्स में तुम एक आइडियल नौजवान हो। अब तुम कम से कम महीना-भर यहीं रहो।"

"महीना-भर !" राजेन्द्र इस बुरी तरह चौंका कि उसके हाथ का शेविंग ब्रुश छूटकर नीचे जा गिरा।

राय नौरंगीलाल अपनी रौ में बोलते चले गए, "हां, हां भाई, कम से कम महीना-भर। महीना-भर कोई ज़्यादा थोड़े ही होता है।

महीना-भर तो यों चुटकी बजाते हुए निकल जाता है। तुम्हें तो पता भी नहीं चलेगा कि महीना कैसे बीत गया ! ...यहां दिल्ली में देखने की इतनी जगहें हैं, और मेरे इतने परिचित व दोस्त-एहवाब यहां हैं कि तुम दो-दो, तीन-तीन को भी अगर एक-एक रोज़ में निबटाओगे, तब भी तुम्हें एक महीना कम ही पड़ेगा...और तब भी बहुत-सी इम्पॉरटेंट हस्तियां और इम्पॉरटेंट जगहें तुमसे छूट ही जाएंगी।" चित्त अत्यधिक प्रसन्न होने के कारण वे अपनी बात पर अपने-आप ही हंसने लगे।

"अच्छा !" फर्श से उठाए शेविंग ब्रुश को दूसरे हाथ से झाड़ते हुए राजेन्द्र ने बनावटी अचरज से कहा।

"हां भाई !" राय नौरंगीलाल ने हंसी के दौरान ही गम्भीर होने की चेष्टा करते हुए कहा, "आज रात यहां घर में पार्टी है। मैंने अपने काफ़ी परिचितों को इन्वाइट किया है। तुमसे मिलकर तो वे लोग बहुत ही खुश होंगे। तुम्हें तो आज ही रात से 'सुबह की चाय', 'दिन के खाने', 'शाम की चाय' और 'रात के खाने' के निमंत्रण मिलने शुरू हो जाएंगे।"

चाचीजी से भेंटकर उनके कमरे से लौटती जयंती के कानों में राय नौरंगीलाल की बात का अंतिम अंश पड़ा तो उसके होश फाख्ता हो गए। वह झटपट बोल उठी और बोलते ही बोलते आगे आ गई, "नहीं चाचाजी, आज तो कुछ नहीं हो सकता—कुछ भी नहीं...बात यह है कि हमें आज रात की गाड़ी से वापस देहरादून पहुंचना है। हम लोग आज किसी भी हालत में दिल्ली नहीं रुक सकते।"

"दिल्ली नहीं रुक सकते !" राय नौरंगीलाल ने नकली क्रोध के साथ कहा, "तुम लोगों की मंशा क्या है ?...एक तो तुम लोगों ने दिल्ली के लोगों—मेरा मतलब है परिचितों और सम्बन्धियों—को बिना बताए देहरादून में शादी की है; और दूसरे, अब शादी के बाद तुम उन सबसे मिलना भी नहीं चाहते।...तुम इस बात को बिलकुल भी ज़रूरी नहीं समझती हो कि हम लोगों के परिचित तुम्हें और राजेन्द्र को एकसाथ देखें और विश्वास कर लें कि सचमुच तुम्हारी शादी हो गई है ?..."

जयंती सकपका गई। कुछ खिसियानी-सी होकर वोली, "चाचाजी, मेरा मतलव यह था कि वाद में भी तो..."

"वाद में कव ?...छः महीने वाद, जव सव परिचितों और रिश्तेदारों को यकीन हो जाएगा कि जयंती ऐसे ही, विना शादी किए राजेन्द्र के साथ चली गई है ?..." राय नौरंगीलाल ने तेज़ स्वर में कहा ; फिर सहसा यह ध्यान कर कि राजेन्द्र की उपस्थिति में सहसा ही सिचुएशन वहुत ज़्यादा गम्भीर और संजीदा हो गई है, उसे अपने-आप ही नार्मल करने की कोशिश करते हुए कुछ धीमे और नर्म पड़ते स्वर में कहा, "नहीं जयंती वेटा, आज मैं तुम्हारी एक न सुनूंगा। आज जो कुछ भी होगा, मेरी मर्ज़ी से होगा। तुम लोगों की एक नहीं सुनी जाएगी। तुम लोगों को मेरे प्रोग्राम में दखल देने का अधिकार ही नहीं होगा। तुम्हारे विवाह और तुम्हारे दिल्ली आने की खुशी में मैंने आज रात घर में मंझले साइज़ की एक पार्टी एरेंज की है। कल रात ही मैंने सव कुछ तय किया है और काफी सारे लोगों को फोन द्वारा निमंत्रित कर दिया है। तुम लोगों का उस पार्टी में शामिल होना वहुत ज़रूरी है। हमारे रिश्तेदार, तुम्हारी सखी-सहेलियां और मेरे परिचित व मित्र सव आएंगे। मेरे ख्याल से राजेन्द्र उन सवसे मिलना भी चाहता है।"

राजेन्द्र ने चौंककर फुर्ती से कहा, "जी हां। मैं सोच तो रहा हूं।"

जयंती ने गुस्से से भरकर राजेन्द्र की ओर देखा, जो मुस्कराकर शेव वनाने में व्यस्त हो गया। राय नौरंगीलाल को अपनी ओर दृष्टि उठाते पाकर, जयंती तत्काल ही अपने चेहरे का भाव वदल आहिस्ता से मुस्कराने लगी।

तभी लल्ली ने अत्यधिक चपल गति से प्रवेश किया। उसके पीछे-पीछे रामा था। अपने चाचा और अपनी वड़ी वहिन की ओर लापरवाह-सी दृष्टि डाल, लल्ली राजेन्द्र की ओर मुखातिव हो वोली, "जीजाजी, जल्दी उठिए। वाहर रोन्जू के पापा खड़े हैं। आपसे मिलना चाहते हैं। यहां आते हुए वहुत झेंप रहे हैं। आइए, उनसे आपका परिचय करवा दूं। फिर वे आफिस चले जाएंगे।"

राजेन्द्र शेव वनाते-वनाते ही उठ खड़ा हुआ। इशारा पाते ही रामा ने फुर्ती से आइना उठा लिया और दरवाज़े की ओर पीठ कर पीछे की ओर सरकने लगा। राजेन्द्र आइने में अपनी शक्ल देख शेव करता-करता ड्राइंग-रूम के वाहर हो गया। हंसी से मुड़ती-तुड़ती लल्ली उसके पीछे-पीछे थी।

जयंती धीरे से राय नौरंगीलाल के वगलवाले सोफे पर वैठ गई। कुछ देर शांति रही। उसके वाद साहस कर जयंती वहुत विनम्रता-पूर्वक राय नौरंगीलाल से वोली, "आप सच मानिए चाचाजी, कल सुवह इनका देहरादून में होना वहुत ज़रूरी है। आप आज की यह पार्टी कैंसिल कर दीजिए। हम लोग अगले हफ्ते फिर आएंगे और तव काफी दिन यहां रहेंगे। आप तव पार्टी दे दीजिएगा।" उसके स्वर में वड़ी दीनता थी।

राय नौरंगीलाल के अंदर का उपन्यास-पाठक अपनी सफलता पर मुस्कराया। तव जयंती की ओर देख राय नारंगीलाल मंद-मंद मुस्कराते हुए वोले, "मुझे पता था, तुम यही सव कहने जा रही हो। मगर ज़रा सोचो तो, क्या इस समय वह सव कुछ सम्भव हो सकता है, जो तुम चाहती हो?···सव वातें तय हो जाने पर अव पार्टी कैसे कैंसिल हो सकती है?···"

निराशा के अंधकार में डगमगाती-सी जयंती ने कुछ विचारकर कहा, "मैं सोच रही थी चाचाजी कि पार्टी में जितना समय वेकार नष्ट होगा उसमें हम कुछ ज़रूरी काम पूरा कर सकते थे। रुपये-वाले मामले का तो अव निवटारा हो ही जाना चाहिए।"

राय नौरंगीलाल भी कुछ सोचते हुए वोले, "हां, रुपये-पैसेवाले मामले का अव निवटारा हो ही जाना चाहिए। मगर देखो वेटा, मुझे गलत न समझना। उसकी इतनी जल्दी क्या है?···क्या यह वहुत ज़रूरी है कि सारी वातें आज ही तय हो जाएं?···जव इतने दिन यह मामला लटका रहा है तो दो-तीन दिन और भी रुक सकता है। कोई भी काम इतमीनान से ही अच्छा होता है।"

"वह तो आप ठीक कहते हैं," जयंती ने थोड़ी चतुराई के साथ कहा, "मैं आज ही हिसाव-किताव हो जाने के लिए इस वजह से कह

जयंती सकपका गई। कुछ खिसियानी-सी होकर बोली, "चाचाजी, रा मतलब यह था कि बाद में भी तो…"

"बाद में कब ?…छः महीने बाद, जब सब परिचितों और श्तेदारों को यकीन हो जाएगा कि जयंती ऐसे ही, बिना शादी ए राजेन्द्र के साथ चली गई है ?…" राय नौरंगीलाल ने तेज़ स्वर कहा ; फिर सहसा यह ध्यान कर कि राजेन्द्र की उपस्थिति में हसा ही सिचुएशन बहुत ज़्यादा गम्भीर और संजीदा हो गई है, से अपने-आप ही नार्मल करने की कोशिश करते हुए कुछ धीमे और र्म पड़ते स्वर में कहा, "नहीं जयंती बेटा, आज मैं तुम्हारी एक न नूंगा। आज जो कुछ भी होगा, मेरी मर्ज़ी से होगा। तुम लोगों ी एक नहीं सुनी जाएगी। तुम लोगों को मेरे प्रोग्राम में दखल देने ा अधिकार ही नहीं होगा। तुम्हारे विवाह और तुम्हारे दिल्ली आने ी खुशी में मैंने आज रात घर में मंझले साइज़ की एक पार्टी एरेंज ी है। कल रात ही मैंने सब कुछ तय किया है और काफी सारे ोगों को फोन द्वारा निमंत्रित कर दिया है। तुम लोगों का उस ार्टी में शामिल होना बहुत ज़रूरी है। हमारे रिश्तेदार, तुम्हारी सखी-सहेलियां और मेरे परिचित व मित्र सब आएंगे। मेरे ख्याल से राजेन्द्र उन सबसे मिलना भी चाहता है।"

राजेन्द्र ने चौंककर फुर्ती से कहा, "जी हां। मैं सोच तो रहा हूं।"

जयंती ने गुस्से से भरकर राजेन्द्र की ओर देखा, जो मुस्कराकर शेव बनाने में व्यस्त हो गया। राय नौरंगीलाल को अपनी ओर दृष्टि उठाते पाकर, जयंती तत्काल ही अपने चेहरे का भाव बदल आहिस्ता से मुस्कराने लगी।

तभी लल्ली ने अत्यधिक चपल गति से प्रवेश किया। उसके पीछे-पीछे रामा था। अपने चाचा और अपनी बड़ी बहिन की ओर लापरवाह-सी दृष्टि डाल, लल्ली राजेन्द्र की ओर मुखातिब हो बोली, "जीजाजी, जल्दी उठिए। बाहर रोन्जू के पापा खड़े हैं। आपसे मिलना चाहते हैं। यहां आते हुए बहुत झेंप रहे हैं। आइए, उनसे आपका परिचय करवा दूं। फिर वे आफिस चले जाएंगे।"

राजेन्द्र शेव बनाते-बनाते ही उठ खड़ा हुआ। इशारा पाते ही रामा ने फुर्ती से आइना उठा लिया और दरवाज़े की ओर पीठ कर पीछे की ओर सरकने लगा। राजेन्द्र आइने में अपनी शक्ल देख शेव करता-करता ड्राइंग-रूम के बाहर हो गया। हंसी से मुड़ती-तुड़ती लल्ली उसके पीछे-पीछे थी।

जयंती धीरे से राय नौरंगीलाल के बगलवाले सोफे पर बैठ गई। कुछ देर शांति रही। उसके बाद साहस कर जयंती बहुत विनम्रता-पूर्वक राय नौरंगीलाल से बोली, "आप सच मानिए चाचाजी, कल सुबह इनका देहरादून में होना बहुत ज़रूरी है। आप आज की यह पार्टी कैंसिल कर दीजिए। हम लोग अगले हफ्ते फिर आएंगे और तब काफी दिन यहां रहेंगे। आप तब पार्टी दे दीजिएगा।" उसके स्वर में बड़ी दीनता थी।

राय नौरंगीलाल के अंदर का उपन्यास-पाठक अपनी सफलता पर मुस्कराया। तब जयंती की ओर देख राय नौरंगीलाल मंद-मंद मुस्कराते हुए बोले, "मुझे पता था, तुम यही सब कहने जा रही हो। मगर ज़रा सोचो तो, क्या इस समय वह सब कुछ सम्भव हो सकता है, जो तुम चाहती हो?...सब बातें तय हो जाने पर अब पार्टी कैसे कैंसिल हो सकती है?..."

निराशा के अंधकार में डगमगाती-सी जयंती ने कुछ विचारकर कहा, "मैं सोच रही थी चाचाजी कि पार्टी में जितना समय बेकार नष्ट होगा उसमें हम कुछ ज़रूरी काम पूरा कर सकते थे। रुपये-वाले मामले का तो अब निबटारा हो ही जाना चाहिए।"

राय नौरंगीलाल भी कुछ सोचते हुए बोले, "हां, रुपये-पैसेवाले मामले का अब निबटारा हो ही जाना चाहिए। मगर देखो बेटा, मुझे गलत न समझना। उसकी इतनी जल्दी क्या है?...क्या यह बहुत ज़रूरी है कि सारी बातें आज ही तय हो जाएं?...जब इतने दिन यह मामला लटका रहा है तो दो-तीन दिन और भी रुक सकता है। कोई भी काम इतमीनान से ही अच्छा होता है।"

"वह तो आप ठीक कहते हैं," जयंती ने थोड़ी चतुराई के साथ कहा, "मैं आज ही हिसाब-किताब हो जाने के लिए इस वजह से कह

रही थी कि आज राजेन्द्र भी यहीं थे···और मैं यह चाहती थी कि उनके सामने ही सारी बातें हो जातीं तो अच्छा था।"

"उसकी तुम चिंता न करो !" राय नौरंगीलाल ने भी उतनी ही चतुराई के साथ जयंती की बात के प्रत्युत्तर में कहा, "राजेन्द्र अभी काफी दिन यहीं रहेगा और सारी बातें उसीके सामने तय होंगी। राजेन्द्र का यहां मेरे सामने रहना बहुत ज़रूरी है···वैसे जितना मैं उसे जान पाया हूं उससे तो मुझे वह बहुत ही भला, नेकदिल, स्मार्ट और खुशमिज़ाज लगा है···मगर इतना ही तो काफी नहीं है। मुझे उसकी ऑरगेनाईज़िग कैपेसिटी के बारे में भी तो पता चलना चाहिए··· मैं यह भी तो देखना चाहूंगा कि वह तुम्हारे पैसों की और तुम्हारी अच्छी तरह देख-भाल कर सकता है या नहीं।···अगर वह झूठी शान और नकली आन के प्रदर्शन में विश्वास रखनेवाला हुआ तो बहुत सम्भव है कि वह तुम्हारा पैसा चुटकी बजाते बराबर कर दे।"

जयंती अपनी दोनों हथेलियों के पुल पर अपनी ठोड़ी रखे बहुत ध्यान से अपने चाचाजी की शंकाएं-कुशंकाएं सुन रही थी।

कुछ रुककर, जयंती की अंदरूनी हलचल का आभास लगाते हुए राय नौरंगीलाल के अंदर के जिज्ञासु उपन्यास-पाठक ने प्रश्न किया, "वैसे राजेन्द्र खुद क्या करता है ? क्या वह किसी सर्विस में है ?"

"नहीं···उनका अपना काम है। उनके चाय के एक-दो बाग हैं। वे उन्हींका काम देखते हैं। एकाध जंगल की कटाई का ठेका भी उन्होंने ले रखा है। इसी सम्बन्ध में एक ज़रूरी काम से उन्हें कुछ लोगों से मिलना है। कुछ ठेकेदारों को उन्होंने टाइम दे रखा है।" पता नहीं किस अज्ञात दैवी शक्ति ने जयंती के मुंह से इतना बड़ा असत्य बहुत सुघड़ता के साथ निकलवा दिया।

"हूंऽऽऽ !" राय नौरंगीलाल ने बहुत संतोष के साथ कहा, "इसका मतलब यह है कि राजेन्द्र अच्छी हैसियत का लड़का है।···"

"जी हां।" जयंती के प्राण जयंती के शरीर में फिर लौटने शुरू हो गए।

"उसका अपना मकान होगा ?" राय नौरंगीलाल ने जयंती को तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हुए कहा, "नौकर-चाकर भी होंगे ?"

"जी हां, सब कुछ है।" जयंती ने अपनी दृष्टि दूसरी ओर फेरते हुए कहा।

"क्या मोटर-वोटर भी पास है ?"

"जी, अभी तो नहीं है; मगर शायद जल्दी ही आ जाएगी। कह रहे थे कि ऑर्डर दे रखा है।" न जाने किस शक्ति से प्रेरित हो जयंता बहुत आत्मविश्वास के साथ धड़ल्ले से झूठ बोलती जा रही थी।

"ठीक है," राय नौरंगीलाल जयंती के दिए हुए विवरण से बहुत ही संतुष्ट दीखे, "तब तो चिंता की कोई बात नहीं है। राजेन्द्र अगर कल सुबह नहीं भी पहुंचा तो उसके नौकर-चाकर तो हैं ही; वे लोग वहां स्थिति संभाल लेंगे।"

जयंती की इच्छा हुई कि ज़ोर से अपना सिर पाट ले। चाचाजी स्थिति को उलझाते ही जा रहे हैं··· स्पष्ट है, वे आज राजेन्द्र और उसे देहरादून नहीं जाने देना चाहते। इसीलिए उन्होंने उन दोनों के गले में पार्टी का फंदा डाल दिया है। शाम को सौ-पचास आदमियों के सामने उनका नये सिरे से ट्रायल होगा · अगर वे इस ट्रायल में असफल रहे और लोगों के मन में कुछ संदेह हो गया तो ? ··

उसने निराश हो, चाचाजी को फिर एक बार समझाने की कोशिश की, "मगर चाचाजी, नौकर-चाकर इनकी जगह बिज़नेस के टर्म्स तो तय नहीं कर सकते। वह काम तो ये खुद ही···"

"ये सब बेकार की बातें हैं।" राय नौरंगीलाल ने कृत्रिम क्रोध के साथ जयंती को झिड़कते हुए कहा, "राजेन्द्र शादी के बाद पहली बार अपनी ससुराल कबड्डी खेलने नहीं आया है कि 'तू-तू-तू' करता भागता आ गया और बिना सांस तोड़े, पाला छूकर वापस हो लिया !···शादी-ब्याह क्या उम्र में बार-बार होते हैं ?···और क्या शादी ज़रूरी काम नहीं है ? राजेन्द्र पहली बार आज ससुराल आया है। हफ्ते-भर तो यहां डटे रहना उसका कर्तव्य है। वैसे धर्म तो एक महीना रहने का है। मगर धर्म की बात छोड़ो। आजकल धर्म का पालन कौन करता है !···वैसे भी राजेन्द्र कामकाजी आदमी है। महीना उसके लिए ज़्यादा हो जाएगा। मगर एक हफ्ता तो वह मज़े से रह ही सकता है। वैसे दिल्ली दर्शनीय जगह है · और फिर

ससुराल भी तो भरी-पूरी है—मां समान सास हैं, पिता समान ससुर हैं, छोटी वहिनें समान सालियां हैं, सालियों के वाल-गोपाल हैं··· इंसान को और क्या चाहिए ?"

झुंझलाहट में जयंती ने दांत से अपनी उंगली काट ली—'वाह री तकदीर !···आई थी रोज़ा वख्शवाने, उलटे नमाज़ गले पड़ गई !···'

राय नौरंगीलाल चुपचाप वैठे उसे जाते हुए देखते रहे। मन ही मन वे सोच रहे थे—उपन्यास का क्लाइमेक्स अव आने ही वाला है। शायद अगले चेप्टर में ही हीरोइन का रहस्य खुल जाए।

नाश्ते के वाद राजेन्द्र का खाने की मेज़ पर लल्ली, छोटी और राय नौरंगीलाल से मुक्त भाव से हंसते, वातें करते छोड़ जयंती मन ही मन सुलगती हुई ऊपर अपने कमरे में पहुंची तो देखा, पलंग पर पुष्पाजी वड़े इतमीनान से विराजमान हैं।

जयंती को लाल चेहरा लिए अकेली आती देख पुष्पा एकदम उठकर वैठ गई और दरवाज़े की ओर झांककर वोली, "खैरियत तो है ?···जीजाजी को कहां छोड़ आई ?"

"जीजाजी !" जलकर जयंती ने कहा, "वड़े आए जीजाजी !··· कहा था और अच्छी तरह समझाया था कि मिस्टर, ज़्यादा आज़ादी न लीजिएगा। ज़रा कायदे में ऐक्टिंग कीजिएगा। लेकिन हज़रत सुवह से इस तरह पेश आ रहे हैं जैसे मैं उनकी सचमुच की पत्नी हूं, और वे सचमुच ही अपनी ससुराल आए हुए हैं। पता है, अभी नीचे आप चाचाजी के सामने क्या फरमा रहे थे ?"

"क्या फरमा रहे थे ?" पुष्पा ने उत्सुकता से पूछा।

"हां···" पुष्पा ने सरलता किन्तु दृढ़ता के साथ उत्तर दिया "आखिर मुझे भी तो शादी करनी है। मेरा इरादा तुम्हारी तरह जीवन-भर अकेली और एकांतवासिनी योगिनी बनी रहने का नहीं है···न ही मेरी स्थिति ऐसी है और न ही मेरे घरवाले मुझे योगिनी बनने देंगे···एम० एड० का डिप्लोमा लेने के बाद मुझे शादी करनी ही होगी···राजेन्द्र से अच्छा लड़का और कहां मिलेगा मुझे !···तुम अगर राजेन्द्र को मुक्ति न देतीं तब मैं राजेन्द्र की तरफ नज़र तक न उठाती, मगर अब तो बात दूसरी है···आखिर राजेन्द्र भी तो शादी करेगा ही···क्यों न हम दोनों तुम्हारी मारफत हुए इस परिचय का लाभ उठा इसे एक सुन्दर और सुदृढ़ रूप दे दें ?···"

आश्चर्य से अवाक् जयंती कुछ देर तो इसी तरह बैठी रही जैसे पुष्पा की बात उसकी समझ में आई ही नहीं। और जब वह बात अच्छी तरह उसकी समझ में आ गई तब उसे लगा कि अपनी 'सुपर-फाइन' रुचियों के कारण ही वह एक-एक कर अपनी सब बाजियां हारती जा रही है···और उसकी वे सब सहेलियां, जिनकी जीवन से बहुत आड़ी-टेढ़ी मांगें नहीं थीं, धड़ाधड़ बाज़ियां जीतती हुई, जीवन की इस दौड़ में जयंती को अपने से कहीं पीछे छोड़ती जा रही हैं।

खिन्न और दुःखी मन से वह पुष्पा से केवल इतना ही कह पाई, "ठीक है, जैसा तुम उचित समझती हो करो। मुझे किसीसे कोई शिकायत नहीं है। तुमसे भी नहीं होगी।"

पुष्पा जयंती की इस बात पर बहुत प्रसन्न दीखी। वह तत्काल ही दरवाज़े की ओर बढ़ती हुई बोली, "इस उदारहृदयता के लिए धन्यावद मैडम जयंती। अच्छा, तो मैं जा रही हूं।"

"कहां ?" कुछ चौंककर जयंती ने प्रश्न किया।

"मिस्टर राजेन्द्र के पास। उनसे कुछ देर गप्पें-शप्पें रहेंगी। यह इतनी बढ़िया साड़ी जो मैंने इस समय पहन रखी है, यह मैं आपको दिखलाने के लिए थोड़े ही पहनकर आई हूं !···यह सब तो राजेन्द्रजी को इम्प्रैस करने का प्रपंच है···समझ में आया आपके ?" पुष्पा ने दरवाजे के पास पहुंचकर घूमते हुए कहा और बहुत शोखी के साथ जीभ बाहर निकाल जयंती को चिढ़ाती वह फुर्ती से कमरे के

ज़ाहर हो गई।

वह पहला अवसर था जब जयंती ने अपने मन में उस चीज़ को एकदम जाग्रत् होते हुए देखा और महसूस किया, जिसे ईर्ष्या कहते हैं। पलंग पर औंधी लेटी वह काफी देर ईर्ष्या की उस आग में जलती-सुलगती रही।

घंटे-एक-भर बाद वह जब राजेन्द्र से आगे के कार्यक्रम के विषय में बात करने नीचे आई तो उसने देखा, राजेन्द्र ने अच्छी खासी महफिल जोड़ रखी है और तन्मयतापूर्वक बातें सुननेवाले श्रोताओं में राय नौरंगीलाल से लेकर रामा तक शामिल हैं। राजेन्द्र सिर हिला, हंसता-मुस्कराता कहानी सुना रहा है। साथ ही वह अखबार के कागज़ से रोन्जू के लिए पानी का बहुत बड़ा जहाज़ भी बना रहा है। सब लोग मग्न और प्रसन्न हैं। कुछ देर अपमानित, उपेक्षित और तिरस्कृत-सी खड़ी रह वह धीरे-धीरे सीढ़ियां चढ़ फिर अपने कमरे में लौट आई।

राजेन्द्र दिन-भर इसी तरह व्यस्त रहा और जयंती उससे एकांत में एक भी बात करने का अवसर न पा सकी। काफी देर तो पुष्पा ही उसे घेरकर बैठी रही और भगवान जाने क्या-क्या बातें करती रही। रात को पार्टी में अवश्य आने का वायदा कर पुष्पा विदा हुई तो लल्ली और छोटी ने अपने नये जीजाजी की संगत का समुचित लाभ उठाने की योजना बना डाली। वे दोनों अपनी दिन की नींद पूरी करने गईं तो राजेन्द्र को चाचीजी की सुध आ गई। वह उनकी तबियत के विषय में पूछने और उन्हें देखने उनके पास चला गया। वहां से वह लौटा तो रामा छाया की तरह उसके साथ-साथ था। चाय का टाइम हो जाने के कारण रामा काम करने के लिए उठा तो ढेर सारे पुराने अखबार लिए हुए रोन्जू साहब आ धमके और राजेन्द्र उनके 'फरमायशी प्रोग्राम' को प्रस्तुत करने में व्यस्त हो गया। वह अभी तीन-चार किश्तियां और हवाई जहाज़ ही बना पाया था कि दिन की नींद पूरी कर राय नौरंगीलाल ड्राइंग-रूम में आ गए और राजेन्द्र सही अर्थ में एक जिज्ञासु बन राय नौरंगीलाल का प्रवचन सुनने में लीन हो गया। प्रवचन का विषय था—'आधुनिक नवयुवक : उसके

असफल रहने के कारण।'

चाय खतम ही हुई थी कि लल्ली और उसके बाद छोटी के पति अपने दफ्तर खतम कर राजेन्द्र से मिलने आ गए। राजेन्द्र उन लोगे के साथ बातचीत में इस बुरी तरह मशगूल हुआ कि फिर जयंती को उसकी शक्ल पार्टी आरम्भ होने से थोड़ी देर पहले ही दीखी, जब वह पार्टी के लिए तैयार होने ऊपर आया।

जयंती भरी बैठी थी। बोली, "आखिर मिल गई आपको फुरसत?"

"फुरसत! किस बात का?" राजेन्द्र जयंती के आक्रोश का सही कारण न समझ सका।

"यहां ऊपर तक आने की!" जयंती ने राजेन्द्र के इस तरह भोले बने रहने के कारण चिढ़कर उत्तर दिया, "यह जो आपने सीढ़ियां चढ़ने की ज़हमत फरमाई है, इसके लिए दिन-भर बाद आपको फुरसत मिल ही गई!"

"ओह! यह बात है!" राजेन्द्र ने बात समझकर कहा, "मगर ऊपर तो मैं जान-बूझकर ही नहीं आया हूं, ताकि तुम्हें किसी प्रकार की झिझक या संकोच न रहे और तुम सुविधा के साथ आराम कर सको या इधर-उधर आ-जा सको।"

"मेरी सुविधा की इतनी चिंता अगर आपको होती तो आप दिन भर वह सब न करते, जो करते रहे हैं।" जयंती के स्वर का व्यंग्य अचानक समाप्त हो गया था और उसमें क्रोध भर आया था।

आश्चर्य से राजेन्द्र का मुंह खुल गया। धीमे स्वर में उसने पूछा "मैं दिन-भर क्या करता रहा हूं!··· सिवाय बातों के?" फिर कुछ रुक जयंती के थोड़ा निकट आता हुआ बोला, "तुम्हें मेरा बातें करना बुरा लगा है?"

आग्नेय दृष्टि से राजेन्द्र की ओर देखते हुए जयंती ने क्रुद्ध स्वर में कहा, "मैंने आपसे ट्रेन में क्या कहा था! नेचुरल तरीके से बर्ताव कीजिएगा। ओवर-एक्ट मत कीजिएगा···ज़्यादा आज़ादी भी मत लीजिएगा···और आपने इसका वायदा भी किया था···माफ कीजिए, मगर स्टेशन पर पहुंचते ही आप अपना वायदा भूल गए

तब से अब तक आप जिस आज़ादी और अधिकार के साथ इस घर में वर्ताव कर रहे हैं उससे तो ऐसा लग रहा है कि यह घर आप ही का है और मैं इसमें बहू बनकर आई हूं। जिस आनन्द के साथ झूमते, हंसते-मुस्कराते आप पुष्पा और लल्ली व छोटी के साथ बातें कर रहे थे, उसे देख बाहर का कोई भी आदमी यही अन्दाज़ा लगाता कि आप उनके साथ फ्लर्ट कर रहे हैं…" आवेश में जयंती एक सांस में बोलती ही चली गई।

बात को गम्भीर शक्ल न दे, उसे हंसी में ही उड़ाने की कोशिश करते हुए राजेन्द्र ने कहा, "जयंती, मुझे अपना वायदा अभी तक याद है…मगर क्या करूं, तुम्हारे घर के लोग इतने अच्छे हैं, स्नेही हैं और इतनी जल्दी घुल-मिल जानेवाले हैं कि उन्होंने मुझे इस बात का अहसास ही नहीं होने दिया कि मैं किसी पराये घर में बैठा हूं।…सुबह से मुझे बिलकुल यही लग रहा है कि यह मेरा ही घर है और बरसों से मैं यहीं रह रहा हूं…और रही बात पुष्पा और लल्ली-छोटी से हंसने-बोलने की; तो भई, उसमें मेरा क्या दोष ?… वे सब तो मेरी सालियां हैं—ससुराल की शोभा ! तुमने वह कहावत तो सुनी ही होगी—'घर सजता है दीवाली से और ससुराल सजती है साली से !'…उनसे हंसना-बोलना और उन्हें प्रसन्न रखना तो मेरा कर्तव्य है।…और दूसरे, वे सब मुझे कितने प्यार से 'जीजाजी' कहती हैं—खास तौर से लल्ली। वह 'जीजाजी' नहीं, बल्कि बहुत ही मिठास के साथ 'जीजाजि' कहती है…और सच मानो जयंती, मुझे तब ऐसा लगता है जैसे मेरे मुंह में रखा हुआ कोई रस-भरा गुलाब-जामुन अपने-आप ही घुल रहा है !…और पुष्पा की तो तुम बात ही न पूछो !…वह तो लाखों में एक है।…ऐसी बातें करती है कि रोता आदमी हंस जाए…सच जयंती, तुम बहुत सौभाग्यशाली हो जो तुम्हें इतनी अच्छी सहेली मिली।"

जैसे किसीने आग पर घी उंडेल दिया हो, जयंती उस तरह एकदम भभक उठी, "जी हां, यह अच्छी सहेलियों का ही तो काम होता है कि अपनी सहेली का घर जला, उस आग से अपने घर की दीवाली मनाना !…इतनी अच्छी सहेली मिल जाने पर मैं क्यों न अपना

सौभाग्य सराहूंगी ! ···और आपको वह सहेली तो ज़रूर ही लाखों में एक दीखेगी। जो दूसरे की खुशियां छीनकर स्वयं खुश होने की चेष्टा करे वह सचमुच ही लाखों में एक होगी !" जयंती के स्वर में कटुता आ गई थी।

राजेन्द्र के चेहरे की मुस्कराहट गायब हो गई थी। वह इस तरह खड़ा था जैसे बहुत उत्साह से ऑफिस पहुंचने पर किसी ऑफीसर को अपने मातहतों के सामने यह पता लगे कि वह उसी समय नौकरी से निकाल दिया गया है। जयंती से दृष्टि बचाने के लिए वह इधर-उधर देखने लगा।

तब बहुत ही संयत स्वर में उसने जयंती से कहा, "आप सचमुच ही बहुत ज़्यादा नाराज़ हो गई हैं। मैंने आपको दुःख पहुंचाया है इसके लिए क्षमा चाहता हूं। मैं भूल गया था कि मैं 'कैजुअल कॉण्ट्रेक्ट' पर हूं।"

अपनी अटैची में से बदलने के लिए कपड़े निकाल वह उन्हें लेकर धीरे-धीरे बाहर चला गया।

खोई-सी खड़ी जयंती को तब यही अनुभूति हुई कि राजेन्द्र से इस तरह बात कर उसने राजेन्द्र के साथ बहुत ज़्यादती की है। मगर अब मन ही मन पछताने के अलावा क्या हो सकता था ! ···तीर तो धनुष से निकल चुका था।

जयंती को डर था कि रात की पार्टी में बहुत ज़्यादा भीड़ होगी, मगर आध घंटे पहले की एक अकस्मात् और अप्रत्याशित बारिश ने आमंत्रितों को घर से रवाना ही नहीं होने दिया। जितने लोगों की आशा थी, उसके आधे आए थे और वे भी जैसे राय नौरंगीलाल और जयंती पर एहसान-सा करने पधारे थे। जयंती के जितने परिचित थे, वे सब उपस्थित थे। मिस्टर एण्ड मिसेज़ (मुरली) कुशवाहा, उनका कलाप्रेमी देवर, भगवती, विक्रम की पत्नी विंदु, पुष्पा और नया सूट पहने निगम साहब—सब लोग अपने उपहारों को साथ ले जयंती और राजेन्द्र से बारी-बारी से मिले और अपनी सारी शुभ कामनाएं उन दोनों पर खर्च कर गए। जयंती वैसे तो खासी परेशान थी, मगर ऊपरी तौर से वह काफी प्रसन्न, प्रफुल्लित और सुन्दर दीख

रही थी तथा एक बनावटी उत्साह और कृत्रिम मुस्कराहट के साथ अपने परिचितों तथा अन्य मेहमानों का स्वागत कर रही थी और उनकी दी हुई मंगल कामनाएं एकत्रित कर रही थी। राजेन्द्र यों तो जयंती को सहयोग दे रहा था और काफी प्रमुदित व चुस्त भी नज़र आ रहा था, लेकिन जयंती को यही लग रहा था कि वह बहुत खिन्न और उदास है।

यही अनुभूति भगवती, विक्रम और विंदु को अपने निगम साहब के बारे में हो रही थी कि इतने उछलने और चहकने तथा नये सूट में बहुत स्मार्ट लगने के बावजूद भी अपने निगम साहब बहुत ही खस्तादिल और मायूस हैं। और निगम साहब थे कि कसमें खा-खाकर इन लोगों को विश्वास दिला रहे थे कि वे बहुत ही खुश हैं कि जयंती से उनकी शादी नहीं हुई।

बातचीत के दौरान मिस्टर भगवती ने चुटकी ली, "क्यों निगम साहब, आपने तो पैगम्बरों की तरह घोषणा की थी कि जयंतीदेवी को इस जीवन में पति नसीब नहीं हो सकेगा!"

असहाय निगम साहब के कुछ फरमाने से पहले ही विक्रम ने कहकहा लगाते हुए कहा, "मिस्टर भगवती, आप भूल रहे हैं कि कभी-कभी पैगम्बर भी गलत स्टेटमेंट दे जाते हैं।"

इस बात पर मिस्टर भगवती ने भी एक जोर का कहकहा लगाया और बोले, "खूब भाई विक्रम, खूब! गोया पैगम्बर पैगम्बर न हुए मिनिस्टर हो गए, जिनके लिए गलत स्टेटमेंट देना एक मामूली बात हो गई।"

विंदु को रह-रहकर निगम साहब पर तरस आ रहा था। निगम साहब को भगवती की बात पर खिसियाने भाव से हंसते देख उसे लगा कि निगम साहब के बचाव के लिए अब उसका कुछ कहना आवश्यक है। वह हंसती हुई बोली, "मिस्टर भगवती, आप बेकार ही निगम साहब को क्यों परेशान कर रहे हैं? साहब, क्या गलत कहा था निगम साहब ने?...जयंती को पति नसीब हुआ है? इस सर्कस-ब्वॉय को आप आदमियों में शुमार करेंगे?"

मिस्टर भगवती ने तत्काल कहा, "क्षमा कीजिए। आप बताइए,

आपको जयंती का पति क्या दीख रहा है ?"

विंदु ने निगम साहब का भूमिगत मॉरल झाड़कर ऊपर उठा रखने की कोशिश करते हुए कहा, "अब क्या कहूं !⋯मुझे हंसी आती है⋯ लेकिन मुझे तो अच्छा-खासा ऊदविलाव नज़र आ रहा है⋯पता नहीं जयंती कहां से पकड़ लाई है इस जन्तु को ?"

निगम साहब का मॉरल और साहस इस समय तक बखूबी जाग उठा था। अचानक अपने को नये सिरे से ज़िंदा महसूस कर उन्होंने फुर्ती से उत्तर दिया, "देहरादून से लाई हैं जयंतीदेवी इस जन्तु को⋯सुना है, वहां चाय-बागीचे में घूम रहा था।"

निगम साहब के 'विट' और 'ह्यूमर' पर भगवती और निगम अपने पर ज़ब्त न कर सके। उन्होंने ज़ोर का एक ठहाका लगाया। विंदु भी अपनी हंसी न रोक सकी और उन दोनों के साथ हंसने लगी।

इन लोगों को इस खुले दिल से हंसते देख, राय नौरंगीलाल के एक मित्र से बातें करती हुई जयंती ने अनुमान लगाया कि यह चांडाल-चौकड़ी उसीपर हंस रही है। अचानक जैसे उसकी सोई पीड़ाएं फिर जाग उठीं और उसके मुंह का स्वाद कड़वा होने लगा। उसके बाद जयंती को पार्टी में रस नहीं आया। वह भगवान से प्रार्थना करने लगी कि लोग जल्दी खा-पी लें और अपनी नकली हंसी के साथ विदा ले, अपने-अपने घर जाएं, ताकि यह बोरडम जल्द खतम हो।

और भगवान ने उसकी सुन भी ली। भोजन से निवृत्त हो, पान-सुपारी, इलायची आदि ले, नये सिरे से नवदम्पति को अपनी हार्दिक शुभ कामनाएं देते हुए सम्मानित अतिथि धीरे-धीरे राय नौरंगीलाल से विदा ले अपने-अपने निवास-स्थानों की ओर प्रस्थान करने लगे। जयंती की सहेलियां, जिनमें मुरली कुशवाहा प्रमुख थी, जाते-जाते उससे फिर शिकायत कर गईं कि 'तूने सारा काम चुपचाप किया। हमें पहले से बताया तक नहीं⋯!' और जयंती सलज्ज भाव से, मुस्कराती, चुपचाप खड़ी उनकी शिकायतों पर अपना सिर हिलाती-डुलाती रही।

केवल घर के ही लोगों के रह जाने पर जयंती ने ध्यान दिया कि राजेन्द्र वहां उपस्थित नहीं है। उसने एक बार फिर अच्छी तरह देखा। सचमुच राजेन्द्र वहां नहीं था। वह धक् से रह गई। उपस्थित व्यक्तियों को 'खाने के बाद की बातों' में मशगूल छोड़ वह घबराहट के साथ भागी-भागी ऊपर अपने कमरे में पहुंची। दरवाज़ा खोल उसने लाइट जलाई। राजेन्द्र वहां भी नहीं था। कांपते हुए उसने उस ओर दृष्टि घुमाई जहां राजेन्द्र की अटैची रखी हुई थी। उसने महसूस किया, जैसे उसके हृदय की गति रुक रही हो···अटैची वहां नहीं थी।

लड़खड़ाते कदमों से बाहर निकल वह बालकनी में आ गई और एक खम्भे के सहारे खड़ी हो गई। नीचे के कमरों से तेज़ रोशनी और लोगों की बातचीत व हंसी के स्वर बिखरकर सूर्य की किरणों की तरह बाहर फैल रहे थे और उस उल्लासपूर्ण व प्रकाशमय वातावरण से कुछ ही फुट ऊपर आधी अंधेरी बालकनी में बिलकुल अकेली खड़ी जयंती अपनी व्यथा के भार को न सह पाने के कारण बिना कोई शब्द किए चुपचाप आंसू बहा रही थी।

थोड़ी देर रोकर अपना जी हलका कर लेने के बाद जयंती प्रकृतिस्थ हो अपने आंसू पोंछती हुई नीचे आई। इस बात में तो उसे अब कोई सन्देह ही नहीं रहा था कि उसके असभ्य और निर्मम व्यवहार से आहत होकर राजेन्द्र बिना किसीसे कहे-सुने चुपचाप यहां से चला गया है। उसने घड़ी देखी। दस से एक-दो मिनट ऊपर हो चुके थे। तेज़ से तेज़ रफ्तारवाली कोई मोटर भी उसे दस-दस—यानी गाड़ी छूटने के समय—से पहले जंकशन नहीं पहुंचा सकती थी;

अतः स्टेशन भागना तो अब बेकार था।

मोटर की बात से अचानक उसे ध्यान आया कि राजेन्द्र पार्टी समाप्त होते ही यहां से किसी टैक्सी से ही जंकशन गया होगा; और वह टैक्सी यदि इस घर में से किसी व्यक्ति ने उसके लिए मंगाई होगी तो रामा ने ही मंगवाई होगी···और किसी व्यक्ति से टैक्सी मंगवाने की तो राजेन्द्र हिम्मत ही नहीं कर सकता था··· रामा से दिन-भर में उसकी खासी घनिष्ठता हो गई थी। उसीको अपने कान्फिडेन्स में ले राजेन्द्र ने पार्टी के दौरान टैक्सी मंगवा ली होगी; बल्कि ऊपर कमरे से अटैची भी रामा से ही मंगवाई होगी और मेहमानों के विदा होते समय, अवसर देख, अटैची-समेत यहां से चुपचाप खिसक गया होगा।

उसने सोचा, रामा से जाकर पूछने पर उसे सही और सारी बात मालूम हो जाएगी।

रामा की खोज में वह ड्राइंग-रूम तक गई, मगर रामा वहां नहीं था। उसे ढूंढ़ती वह किचन की ओर बढ़ रही थी कि चाचीजी के कमरे से बाहर तक आ रहे एक परिचित स्वर को सुनकर वह ठिठक गई। उसका रक्त 'खट्-खट्' कर बजने लगा। धड़कते हृदय से उसने दरवाज़े की आड़ में से झांककर देखा—तकियों के सहारे पलंग पर बैठी राजेश्वरीदेवी चमचे की मदद से डोंगे में से (शायद) दलिया खा रही हैं। बगलवाले मूढ़े पर बैठा राजेन्द्र उनसे और दलिया लेने का आग्रह कर रहा है; और स्वामिभक्त रामा पास खड़ा खीसें निपोर रहा है। जयंती सोचने लगी, पुराण-युग होता तो रामा शायद इस समय चंवर डुलाता होता।

जयंती को लगा—उसके हृदय पर रखा पहाड़ जैसा भार निमिष-मात्र में हट गया है और अब इतनी देर बाद वह खुलकर सांस ले सकेगी। मगर दूसरे ही क्षण उसे राजेन्द्र पर फिर क्रोध आ गया। दूसरों को सताना तो जैसे इनकी छठी में पूजा गया है। मैं इतनी देर से इनके इस तरह गायब हो जाने पर कितनी परेशान हो रही हूं और हज़रत हैं कि यहां छिपे बैठे इस तरह व्यस्त हैं जैसे अपने बहुत ज़रूरी कर्तव्य का पालन कर रहे हों।

धड़धड़ाती हुई वह कमरे के अन्दर जा पहुंची। उसके इस तरह आ जाने से कमरे के तीनों व्यक्ति चौंक उठे। राजेन्द्र मूढ़े से उठकर ज़बर्दस्ती अपने चेहरे पर मुस्कराहट लाता हुआ बोला, "आओ जयंती !"

अपना क्रोध दबाती हुई, जयंती सव्यंग्य कुछ कहने जा रही थी कि कमरे के बाहर कदमों की आहट सुनाई दी और कुछ क्षण बाद ही राय नौरंगीलाल और लल्ली-छोटी के पतियों ने अन्दर प्रवेश किया।

"कहो बेटा, अपनी चाची की सेवा हो रही है !" राय नौरंगीलाल ने दूर से ही प्रसन्न स्वर में कहा। उस समय वे बहुत ही प्रसन्न और उत्फुल्ल नज़र आ रहे थे।

"जी हां," राजेन्द्र ने बहुत विनम्रता के साथ कहा, "चाचीजी के लिए खास तौर से मैंने दलिया बनवाया था। चाचीजी कुछ भी खाने से इनकार कर रही थीं इसलिए मजबूरन, सामने बैठ और कसमें दे-देकर चाचीजी को खिलाना पड़ा। तिसपर भी चाचीजी ने मुश्किल से दो-तीन चमचे ही खाए हैं। देखिए न, बाकी तो वैसा का वैसा ही पड़ा है।" राजेन्द्र के कहने से लग रहा था जैसे चाचीजी के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में वह बहुत ही चिन्तित है।

छिपकर पूड़ी-रायता खा चुकने के बाद दो-तीन डोंगे दलिया उदरस्थ कर, दीवार की ओर मुंह कर लेटी हुई राजेश्वरीदेवी राजेन्द्र की बात सुन बहुत ही संतुष्ट हो उठीं। खाने से अधिक संतुष्टि उन्हें राजेन्द्र की इस बात से हुई कि उसने जनता के सामने ये स्टेटमेंट दिया है कि 'उन्होंने कुछ नहीं खाया है !'

लल्ली और छोटी के पति एक-दूसरे की ओर देख मुस्कराने लगे।

राय नौरंगीलाल मुस्कराते हुए बोले, "चलो, तुम्हारा लिहाज़ कर इन्होंने इतना तो खा लिया; वरना ये तो ऐसी हैं कि कोई लाख सिर पटककर बैठ जाए, ये एक घूंट पानी तक नहीं पीतीं। इसीलिए, देख लो, इन्होंने अपने स्वास्थ्य का क्या हाल कर रखा है !"

अपनी बात के प्रत्युत्तर में किसीको कुछ न कहते देख, राय नौरंगीलाल को सूझा, क्यों न पत्नी के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में ही

अतः स्टेशन भागना तो अब बेकार था।

मोटर की बात से अचानक उसे ध्यान आया कि राजेन्द्र पार्टी समाप्त होते ही यहां से किसी टैक्सी से ही जंकशन गया होगा; और वह टैक्सी यदि इस घर में से किसी व्यक्ति ने उसके लिए मंगाई होगी तो रामा ने ही मंगवाई होगी···और किसी व्यक्ति से टैक्सी मंगवाने की तो राजेन्द्र हिम्मत ही नहीं कर सकता था··· रामा से दिन-भर में उसकी खासी घनिष्ठता हो गई थी। उसीको अपने कान्फिडेन्स में ले राजेन्द्र ने पार्टी के दौरान टैक्सी मंगवा ली होगी; बल्कि ऊपर कमरे से अटैची भी रामा से ही मंगवाई होगी और मेहमानों के विदा होते समय, अवसर देख, अटैची-समेत यहां से चुपचाप खिसक गया होगा।

उसने सोचा, रामा से जाकर पूछने पर उसे सही और सारी बात मालूम हो जाएगी।

रामा की खोज में वह ड्राइंग-रूम तक गई, मगर रामा वहां नहीं था। उसे ढूंढ़ती वह किचन की ओर बढ़ रही थी कि चाचीजी के कमरे से बाहर तक आ रहे एक परिचित स्वर को सुनकर वह ठिठक गई। उसका रक्त 'खट्-खट्' कर बजने लगा। धड़कते हृदय से उसने दरवाज़े की आड़ में से झांककर देखा—तकियों के सहारे पलंग पर बैठी राजेश्वरीदेवी चमचे की मदद से डोंगे में से (शायद) दलिया खा रही हैं। बगलवाले मूढ़े पर बैठा राजेन्द्र उनसे और दलिया लेने का आग्रह कर रहा है; और स्वामिभक्त रामा पास खड़ा खीसें निपोर रहा है। जयंती सोचने लगी, पुराण-युग होता तो रामा शायद इस समय चंवर डुलाता होता।

जयंती को लगा—उसके हृदय पर रखा पहाड़ जैसा भार निमिष-मात्र में हट गया है और अब इतनी देर बाद वह खुलकर सांस ले सकेगी। मगर दूसरे ही क्षण उसे राजेन्द्र पर फिर क्रोध आ गया। दूसरों को सताना तो जैसे इनकी छठी में पूजा गया है। मैं इतनी देर से इनके इस तरह गायब हो जाने पर कितनी परेशान हो रही हूं और हज़रत हैं कि यहां छिपे बैठे इस तरह व्यस्त हैं जैसे अपने बहुत ज़रूरी कर्तव्य का पालन कर रहे हों।

धड़धड़ाती हुई वह कमरे के अन्दर जा पहुंची। उसके इस तरह आ जाने से कमरे के तीनों व्यक्ति चौंक उठे। राजेन्द्र मूढ़े से उठकर जबर्दस्ती अपने चेहरे पर मुस्कराहट लाता हुआ बोला, "आओ जयंती!"

अपना क्रोध दबाती हुई, जयंती सव्यंग्य कुछ कहने जा रही थी कि कमरे के बाहर कदमों की आहट सुनाई दी और कुछ क्षण बाद ही राय नौरंगीलाल और लल्ली-छोटी के पतियों ने अन्दर प्रवेश किया।

"कहो बेटा, अपनी चाची की सेवा हो रही है!" राय नौरंगीलाल ने दूर से ही प्रसन्न स्वर में कहा। उस समय वे बहुत ही प्रसन्न और उत्फुल्ल नज़र आ रहे थे।

"जी हां," राजेन्द्र ने बहुत विनम्रता के साथ कहा, "चाचीजी के लिए खास तौर से मैंने दलिया बनवाया था। चाचीजी कुछ भी खाने से इनकार कर रही थीं इसलिए मजबूरन, सामने बैठ और कसमें दे-देकर चाचीजी को खिलाना पड़ा। तिसपर भी चाचीजी ने मुश्किल से दो-तीन चमचे ही खाए हैं। देखिए न, बाकी तो वैसा का वैसा ही पड़ा है।" राजेन्द्र के कहने से लग रहा था जैसे चाचीजी के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में वह बहुत ही चिन्तित है।

छिपकर पूड़ी-रायता खा चुकने के बाद दो-तीन डोंगे दलिया उदरस्थ कर, दीवार की ओर मुंह कर लेटी हुई राजेश्वरीदेवी राजेन्द्र की बात सुन बहुत ही संतुष्ट हो उठीं। खाने से अधिक संतुष्टि उन्हें राजेन्द्र की इस बात से हुई कि उसने जनता के सामने ये स्टेटमेंट दिया है कि 'उन्होंने कुछ नहीं खाया है!'

लल्ली और छोटी के पति एक-दूसरे की ओर देख मुस्कराने लगे।

राय नौरंगीलाल मुस्कराते हुए बोले, "चलो, तुम्हारा लिहाज कर इन्होंने इतना तो खा लिया; वरना ये तो ऐसी हैं कि कोई लाख सिर पटककर बैठ जाए, ये एक घूंट पानी तक नहीं पीतीं। इसीलिए, देख लो, इन्होंने अपने स्वास्थ्य का क्या हाल कर रखा है!"

अपनी बात के प्रत्युत्तर में किसीको कुछ न कहते देख, राय नौरंगीलाल को सूझा, क्यों न पत्नी के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में ही

जानकारी एकत्र कर ली जाए···आखिर वे उनके कमरे तक तो आ ही गए हैं। अपने स्वर में सहृदयता लाते हुए उन्होंने प्रश्न किया, "कहो भाई, अब तबियत कैसी है ?"

राजेश्वरीदेवी की ओर से कोई उत्तर न मिलता देख, राजेन्द्र ने धीमे स्वर में कहा, "शायद सो गई हैं।"

राजेश्वरीदेवी ने तत्काल अपनी आंखें बन्द कर लीं।

राय नौरंगीलाल ने बहुत ही धीमे स्वर में, लगभग फुसफुसाते हुए कहा, "ऐसा ही लगता है। चलो, हम लोग यहां से चलें। इन्हें आराम करने दें। हम लोगों के बाहर चले जाने के बाद रामा लाइट बन्द कर देगा।"

सभा विसर्जित कर वे सब लोग बाहर निकल आए और फिर ड्राइंग-रूम में आ गए। रामा पीछे-पीछे था।

राजेन्द्र के कंधे पर हाथ रख राय नौरंगीलाल ने स्नेह-सिक्त स्वर में कहा, "कहो बेटा, पार्टी कैसी रही ? डिड यू एन्जॉय ?"

"जी हां, मुझे तो बहुत ही आनन्द आया।" राजेन्द्र ने अपनी जम्हाई रोकने की कोशिश करते हुए कहा, "मेरे ख्याल से पार्टी बहुत ही सफल रही।"

लल्ली और छोटी बहुत देर से गायब थीं। इसी समय उन्होंने एकसाथ अश्विनीकुमार की तरह अन्दर प्रवेश किया। लल्ली ने आते ही राजेन्द्र से कहना आरम्भ किया, "जीजाजी ! बड़ी ज़्यादती है आपकी !···हमें अपनी स्वीट बातों से वंचित रख रहे हैं !"

राजेन्द्र ने फीकी मुस्कराहट के साथ कहा, "अपनी ज़्यादती की ओर भी ध्यान है आपका ?···इतनी देर से हम आप दोनों की स्वीट कम्पनी से वंचित हैं···आपके पति-परमेश्वर को तो किसी बात में रस ही नहीं आ रहा है। आप थीं कहां अब तक ?"

लल्ली और छोटी ने कुछ सकपकाकर एक-दूसरी की ओर देखा और तब आंखों ही आंखों में कुछ कह-सुन वे दोनों आशयपूर्वक मुस्कराने लगीं।

राजेन्द्र ने फिर प्रश्न किया, "यह आप आंखों ही आंखों में क्या मिसकौट कर रही हैं ?···"

"कुछ नहीं।" लल्ली ने मुस्कराकर बात उड़ा दी।

"कुछ नहीं...तो फिर आप लोग मुस्करा क्यों रही हैं?..." राजेन्द्र ने कुछ कौतूहल के साथ प्रश्न किया।

"जीजाजी, आप थोड़ा सन्तोष रखिए," इस बार छोटी ने उत्तर दिया, "सन्तोष का फल हमेशा मीठा होता है। थोड़ी देर में आपको स्वयं ही मालूम हो जाएगा कि हम..."

"कौन-सा षड्यंत्र रच रही थीं।" राजेन्द्र ने हंसते हुए छोटी की बात पूरी की। तब गरदन झुका उन दोनों बहिनों को हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए कहा, "षड्यन्त्रकारियों को मेरा—यानी उनके शिकार का—प्रणाम! भगवान करे आपका षड्यन्त्र सफल हो!... मेरी हार्दिक शुभ कामनाएं!" और वह हंसने लगा।

लल्ली और छोटी भी जयंती की ओर देख हंसने लगीं।

राय नौरंगीलाल को सहसा इस बात का ध्यान आ गया कि काफी देर हो गई है। बोले, "ये लोग तो दिन-भर के थके होंगे। कल रात ये ट्रेन में थे। आज दिन-भर ये लोग खासे व्यस्त रहे हैं। अब इन्हें आराम करने दो...वैसे अब देर भी काफी हो गई है। ग्यारह बजनेवाले होंगे।" राय नौरंगीलाल सोफे से उठ खड़े हुए। राजेन्द्र भी साथ ही उठ खड़ा हुआ।

"अच्छा चाचाजी, आज्ञा दीजिए!" कहते-कहते राजेन्द्र राय नौरंगीलाल के चरणों में झुक गया।

"यह आज्ञा किस बात की ले रहे हो बेटा?" राय नौरंगीलाल ने सहसा ही आशंकित होकर प्रश्न किया, "क्या इस समय देहरादून जाने की सोच रहे हो?"

"नहीं चाचाजी," राजेन्द्र ने हंसकर उत्तर दिया, "मैं तो सोने जा रहा था, इसलिए आपसे विदा ले रहा था।"

"अब किस-किस बात की आज्ञा लेंगे भाई साहब!" लल्ली के पति को भी आखिर अपनी झेंप मिटाने का अवसर मिल ही गया।

सिवाय जयंती के, सब लोग इस बात पर खूब हंसे। सबसे ज़्यादा तो राजेन्द्र ही हंसा। हंसते-हंसते सब लोग अपने-अपने कमरों की ओर बढ़ने लगे। 'गुड नाइट' कर राजेन्द्र और जयंती सीढ़ियों

की ओर मुड़ गए और लल्ली व उसके पति, छोटी तथा उसके पति को उनके कमरे के सामने छोड़, अपने कमरे में चले गए।

राय नौरंगीलाल दरवाज़े पर ही रुक गए थे। सब लोगों के चले जाने के बाद उन्होंने मुड़कर, अपने पीछे खड़े रामा को उंगली से अपने पास बुलाया और बहुत धीमे स्वर में उससे पूछा, "राजेन्द्र की अटैची उसी जगह रख आए थे न जहां से उठाकर लाए थे!"

"जी हां, बिलकुल उसी जगह···उस वक्त पार्टी खतम ही हुई थी···" रामा ने भी उतने ही धीमे स्वर में उत्तर दिया।

संतुष्ट भाव से राय नौरंगीलाल ने रामा की नमस्ते का जवाब दिया और मंथर गति से अपने कमरे की ओर बढ़ने लगे। उनके चेहरे पर बहुत प्यारी-सी मुस्कराहट थी। कदाचित् उनके अन्दर के जिज्ञासु उपन्यास-पाठक को इस सारी कहानी का रहस्य मालूम हो गया था।

सीढ़ियां चढ़ते हुए राजेन्द्र ने गला खखारकर गुमसुम जयंती की दिशा में अपना मुंह कर आहिस्ता से कहा, "आप शायद अभी तक मुझसे बहुत नाराज़ हैं?"

जयंती ने कोई उत्तर नहीं दिया।

दो सीढ़ियां चढ़ राजेन्द्र रुक गया। बोला, "आपने मेरी बात का जवाब नहीं दिया?"

जयंती भी ठिठककर खड़ी हो गई। तब राजेन्द्र की ओर देखकर बोली, "दूसरों को सताते रहने की तो आपने जैसे कसम खा रखी है!" और आगे बढ़ गई।

जयंती के नज़दीक आ, एक सीढ़ी ऊपर चढ़ जाने पर राजेन्द्र ने

की ओर मुड़ गए और लल्ली व उसके पति, छोटी तथा उसके प
को उनके कमरे के सामने छोड़, अपने कमरे में चले गए।

राय नौरंगीलाल दरवाज़े पर ही रुक गए थे। सब लोगों
चले जाने के बाद उन्होंने मुड़कर, अपने पीछे खड़े रामा को उंगल
से अपने पास बुलाया और बहुत धीमे स्वर में उससे पूछा, "राजे
की अटैची उसी जगह रख आए थे न जहां से उठाकर लाए थे!

"जी हां, बिलकुल उसी जगह···उस वक्त पार्टी खतम ही हु
थी···" रामा ने भी उतने ही धीमे स्वर में उत्तर दिया।

संतुष्ट भाव से राय नौरंगीलाल ने रामा की नमस्ते का जवाब
दिया और मंथर गति से अपने कमरे की ओर बढ़ने लगे। उनके
चेहरे पर बहुत प्यारी-सी मुस्कराहट थी। कदाचित् उनके अन्दर के
जिज्ञासु उपन्यास-पाठक को इस सारी कहानी का रहस्य मालूम हो
या था।

सीढ़ियां चढ़ते हुए राजेन्द्र ने गला खखारकर गुमसुम जयंती की
दिशा में अपना मुंह कर आहिस्ता से कहा, "आप शायद अभी तक
मुझसे बहुत नाराज़ हैं?"

ज़यंती ने कोई उत्तर नहीं दिया।

दो सीढ़ियां चढ़ राजेन्द्र रुक गया। बोला, "आपने मेरी बात का
जवाब नहीं दिया?"

जयंती भी ठिठककर खड़ी हो गई। तब राजेन्द्र की ओर देख-
कर बोली, "दूसरों को सताते रहने की तो आपने जैसे कसम खा रखी
है!" और आगे बढ़ गई।

जयंती के नज़दीक आ, एक सीढ़ी ऊपर चढ़ जाने पर राजेन्द्र ने

किंचित् आश्चर्य से प्रश्न किया, "आपने जब मुझे डांटा था, उसके बाद भी क्या मैंने कोई ऐसा काम किया है जिससे आपको कष्ट पहुंचा है ?"

जयंती ने उसकी ओर एक भाव-रहित दृष्टि डाली और निर्विकार स्वर में बोली, "यह सवाल अपने-आपसे कीजिए।"

राजेन्द्र कुछ क्षण उसी तरह खड़ा रहा। तब लपककर चार-पांच सीढ़ियां उछल जयंती के निकट आकर बोला, "देखिए, अपनी समझ से मैंने उसके बाद कोई ऐसा काम नहीं किया है। वैसे अगर आप मुझे यह बतला सकें कि मेरी किस बात से आप फिर दुःखी हुई हैं तो मैं आपका आभार मानूंगा।"

जयंती ने रुककर राजेन्द्र की ओर देखा। उस अंधेरे-से में भी उसे यह लग गया कि यह बात राजेन्द्र ने बनकर नहीं, वरन बहुत सरल हृदय से कही है। कुछ झुंझलाकर उसने कहा, "आप अपनी अटैची कहीं छिपा नहीं गए थे ; ताकि आपको पार्टी में न देख मैं आपको ढूंढ़ती ऊपर आऊं और आपकी अटैची न देख यह अनुमान लगा लूं कि आप बिना बताए चले गए हैं !"

कुछ देर राजेन्द्र जयंती की बात समझने की कोशिश करता रहा। जब वह बात उसकी समझ में आ गई तो आगे बढ़ती जयंती की ओर मुंह कर वह ज़ोर से बोला, "मैंने अटैची नहीं छिपाई थी। मुझे इस बारे में कुछ नहीं मालूम।"

जयंती रुक गई। मुड़कर, आवाज़ दबाती हुई वह बोली, "और ज़ोर से चिल्लाइए, ताकि सब लोगों को मालूम हो जाए।"

राजेन्द्र दांतों से अपनी जीभ काटता हुआ, उछलकर सीढ़ियां चढ़ता ऊपर जयंती के पास आ गया और फुसफुसाकर बोला, "आई एम सॉरी...मगर मैं क्या करता ? मुझे जोश आ गया था...आप सच मानिए, मैंने अटैची नहीं छिपाई।"

राजेन्द्र की ओर अविश्वासपूर्ण दृष्टि डाल जयंती बोली, "जी हां, अटैची के शायद पैर निकल आए होंगे और वह अपने-आप ही कहीं जाकर छिप गई होगी !" वह आगे चली गई।

जयंती के पीछे-पीछे आता राजेन्द्र बोला, "अब यकीन करना, न

करना आपके हाथ है। पर मैं सच कह रहा हूं, मैंने अटैची को हाथ तक नहीं लगाया ; न मैंने उसे कहीं छिपाया है।"

जयंती विना कुछ वोले, विना राजेन्द्र की ओर देखे, चुपचाप आगे वढ़ती गई। राजेन्द्र उसके साथ होते हुए भी, सहमा-सा उससे एक-दो कदम पीछे था।

कमरे के सामने पहुंच जयंती ने ठेलकर दरवाज़ा खोला और स्विच दवाया। सारे कमरे में हलका दूधिया प्रकाश फैल गया और उस प्रकाश में उन्हें जो कुछ दीखा उससे उन दोनों की आंखें खुली की खुली रह गईं। उनका पलंग फूलों से सजा हुआ था। सिरहाने से लेकर पैंताने तक फूल ही फूल थे और उनकी मादक सुंगव से सारा कमरा महक रहा था। उस सुगंध ने कमरे के वातावरण को अत्यधिक आत्मीय और नशीला वना दिया था···आत्मविस्मृत करनेवाले इस नशे के आकर्षण की उपेक्षा करना वहुत ही कठिन होगा—दोनों ने निमिष-मात्र में इसे महसूस कर लिया।

जयंती ने आश्चर्य से राजेन्द्र की ओर देखा। हलके व्यंग्य के साथ राजेन्द्र जयंती के चेहरे को टकटकी लगाकर देखता हुआ वोला, "अव कह दीजिए, यह पलंग भी फूलों से मैंने ही सजाया है।"

लज्जित-सी हो जयंती दूसरी ओर देखने लगी। तव जैसे कुछ निश्चय कर वह द्रुत गति से पलंग की ओर वढ़ी और उन फूल-मालाओं को खींचकर तोड़ने लगी।

"अरे रे रे ! यह आप क्या कर रही हैं ?" कहता हुआ राजेन्द्र लपककर जयंती के पास पहुंचा और उसका हाथ पकड़ता हुआ वोला, "यह आपको क्या हो गया है···और कुछ नहीं तो लल्ली और छोटी के सेंटिमेंट्स की ओर ही ध्यान दीजिए। वेचारियों ने कितनी मेहनत से इसे सजाया होगा ! ···और आप हैं कि उनके परिश्रम, उनके पैसे और उनकी भावनाओं को इस निर्दयता के साथ ठुकरा रही हैं ! ··· अगर आपको फूल पसन्द नहीं हैं तो इन्हें एक ओर कर दीजिए और सो जाइए···मगर इन्हें इस वेरहमी से नोचिए तो मत। आप शायद भूल रही हैं कि हम दोनों एक नाटक में अभिनय कर रहे हैं। यह नाटक का अन्तिम अंक चल रहा है। हमें अपने अभिनय द्वारा सावित

करना है कि दर्शक जो कुछ भी देख रहे हैं, वह नाटक नहीं यथार्थ है। कल सुबह फूलों को इस उपेक्षा के साथ कुचले हुए देखकर आपके घरवाले क्या सोचेंगे ?···अपने इस क्षणिक आवेश में नाटक और दर्शकों के आनन्द को किरकिरा न कीजिए।"

जयंती ने भाव-रहित दृष्टि से राजेन्द्र की ओर देखा और वेज़ायका स्वर में बोली, "मेरे हाथ तो छोड़ दीजिए !"

"ओह ! माफ कीजिए !" कहते हुए राजेन्द्र ने लज्जित भाव से जयंती के दोनों हाथ मुक्त कर दिए, "मुझे ध्यान ही नहीं रहा था। आई होप, आई डिडण्ट हर्ट यू !"

जयंती ने कोई उत्तर नहीं दिया। एक लम्बी सांस ले वह बालकनी की ओर बढ़ने लगी। बगलवाले बंगले में बज रहे रेडियो पर हो रही वॉयलिन की धुन कमरे तक आ रही थी और रात्रि की इस नीरवता में बहुत ही प्रिय और सुखद लग रही थी।

राजेन्द्र ने भी एक लम्बी सांस ली और जयंती द्वारा नोचकर फेंके गए गजरे को फर्श से उठा उसे सूंघ उसकी गंध से जैसे घायल हो, उसे पलंग पर रखता हुआ, रस-भीगे स्वर में बोला, "आज प्रकृति भी जैसे इस नाटक के अभिनय के लिए आदर्श और स्वाभाविक वातावरण प्रस्तुत कर रही है। नीचे दूर तक फैली यह भीगी वनस्पति···भीगी धरती की यह सौंधी और भीनी महक···यह दूधिया उज्ज्वल शुभ्र प्रकाश···गमकते हुए गजरों की मादक सुगंध···और इस सबके साथ सोने में सुगंध की तरह पासवाले बंगले के रेडियो पर बजती वॉयलिन के दरबारी कान्हड़ा राग की आत्मविस्मृत करनेवाली यह मद्धिम-सी अनुगूंज !···सुहागरात के लिए इससे आदर्श सैटिंग की सृष्टि भगवान भी दोबारा नहीं कर सकते।···" और उसने एक लम्बी सांस छोड़ी।

जयंती बिजली की फुर्ती से मुड़ी और तेज़ी से उसके पास आती हुई क्रुद्ध और दुःखी स्वर में बोली, "राजेन्द्र, आप मेरी मजबूरी और लाचारी का फायदा उठा, इतनी ज़्यादा लिबरटी न लीजिए प्लीज़···मैं आपके हाथ जोड़ती हूं···हम लोगों को रात-भर इस कमरे में साथ-साथ रहना होगा, यह सोच मेरे प्राण खुश्क हुए जा

रहे हैं और आपको रात के ग्यारह बजे कविता सूझ रही है।" जयंती का स्वर रुआंसा हो गया था।

राजेन्द्र ने बनावटी आश्चर्य के साथ कहा, "प्राण खुश्क होने की क्या बात है ? हम लोग कल रात भी तो एक-दूसरे का विश्वास कर इसी तरह सोए थे।"

"कल रात की बात और थी," जयंती ने स्थिति समझाने का प्रयास किया, "कल रात हम ट्रेन में थे, आज···"

"आज भी हम ट्रेन ही में हैं—आप यही समझिए।" राजेन्द्र ने फुर्ती से जयंती की बात पूरी की और एक कोने में रखा अपना होलडाल उठा, नीचे बिछी दरी के एक कोने में उसे खोलकर अपना बिछौना तैयार करता हुआ बोला, "लीजिए साहब, हमने तो इस बर्थ पर अपना बिस्तर बिछा लिया। आपका बिस्तर पलंग-वाली बर्थ पर है ही···ट्रेन के चुपचाप खड़े इस कम्पार्टमेंट की बत्ती रात-भर जलती ही रहेगी···अब बताइए, गला खुश्क होने की क्या बात है ?"

जयंती ने कोई उत्तर नहीं दिया। आग्नेय दृष्टि से राजेन्द्र की ओर देख चुपचाप गले से माला उतारने लगी।

अचानक राजेन्द्र को अटैची का ध्यान आया और उसकी दृष्टि उस ओर गई। अटैची को उसी जगह मौजूद देख उसने कहा, "लीजिए, रखी हुई तो है अटैची वहां। और आप फरमा रही थीं कि अटैची मैं कहीं छिपा गया था।"

जयंती ने पथरीले भाव-रहित स्वर में कहा, "मैंने जिस समय उस तरफ देखा था, उस समय अटैची उस जगह नहीं थी।"

राजेन्द्र कुछ चौकन्ना-सा होकर घुटनों के सहारे अपने बिस्तर पर बैठ गया और धीमे-सधे स्वर में बोला, "आपको ठीक याद है, अटैची उस जगह नहीं थी ?"

अब जयंती के भी कान खड़े हुए। बोली, "नहीं। मैंने अच्छी तरह देखा था, अटैची वहां नहीं थी। नीचे आप मुझे दीखे नहीं तभी तो मैं समझी कि आप चले गए हैं···"

"इसका मतलब तो यही है कि इस बीच यहां से किसीने अटैची

उठाई है और थोड़ी देर बाद फिर यहीं रख दी है।" कहता-कहता राजेन्द्र अटैची के निकट आकर अपनी जेब से चाबी निकालकर उसे खोलने लगा।

जयंती माला उतार चुकी थी और अपने ईयर-रिंग्स उतार रही थी। राजेन्द्र की बात सुन उसके हाथ वहीं रुक गए।

अटैची खोल उसका अस्त-व्यस्त सामान देख राजेन्द्र परेशान स्वर में बोला, "मेरा सोचना ठीक था। इस दौरान किसीने अटैची की अच्छी तरह खाना-तलाशी ली है।"

जयंती का दिल धक्-धक् करने लगा। कांपते स्वर में बोली, "तुम्हारा सामान तो ठीक-ठीक है न? कोई चीज़ गुम तो नहीं हुई है?···रुपया पैसा?···"

बहुत ही परेशानी और चिन्ता के साथ राजेन्द्र ने उलझे स्वर में जैसे अपने-आपसे ही बुदबुदाते हुए बात की, "रुपया-पैसा तो ठीक है, मगर तुम्हारी चिट्ठियां नहीं दीख रही हैं। वे ही साफ कर दी हैं किसीने!···"

जयंती का माथा एकदम ठनका। उठकर राजेन्द्र के निकट आती हुई वह शीघ्रता के साथ बोली, "मेरी चिट्ठियां!···कौन-सी चिट्ठियों का ज़िक्र कर रहे हो तुम?···"

एक क्षण के अन्दर ही राजेन्द्र को अपनी भयंकर भूल का आभास हो गया था; किन्तु उस समय तक बहुत ज़्यादा देर हो चुकी थी और स्थिति उसके हाथों से इस तरह निकल चुकी थी कि वह लाख कोशिश करने पर भी उसे संभाल नहीं सकता था।

माथे पर आ गए पसीने को पोंछते हुए उसने झूठ बोलने की अंतिम और असफल कोशिश की। खिसियाई-सी हंसी हंसता हुआ वह बोला, "मेरा मतलब है···मेरी चिट्ठियां···मेरी कुछ ज़रूरी चिट्ठियां थीं···वे नहीं दीख रही हैं···आप आज कुछ इस तरह मेरी चेतना पर छाई हुई हैं कि मुझे हर अपनी चीज़ आपकी ही नज़र आ रही है···" वह फिर नकली भाव से हंसा।

"जी, वह तो मैं समझ रही हूं।" जयंती ने राजेन्द्र की आंखों में झांकते हुए कहा, "आप यह बतलाइए कि मेरी कौन-सी चिट्ठियां

आपके पास हैं ? और वे आपके पास कैसे पहुंचीं ?"

राजेन्द्र ने महसूस किया, अब और अधिक झूठ न चल सकेगा रूमाल निकाल अपना पसीना पोंछते हुए उसने धीमे स्वर में उत्तर दिया, "मेरे पास आपकी वे चिट्ठियां थीं जो आपने मुझे लिखी थीं !"

"मैंने आपको कौन-सी चिट्ठियां लिखी थीं ?···और कब ?' जयंती ने प्रश्न का उत्तर जानते हुए भी धड़कते हृदय से प्रश्न किया।

राजेन्द्र बहुत गम्भीर हो गया। संजीदा स्वर में धीरे से बोला, "मुझसे तो आप इस प्रश्न के उत्तर की उम्मीद न कीजिए ; क्योंकि इस प्रश्न से एक कुमारीजी के जीवन का रहस्य जुड़ा हुआ है···और कुमारीजी की इज़्ज़त की रक्षा करना सभ्यता के नाते मेरा कर्तव्य है···इसलिए ज़्यादा अच्छा यही होगा कि अपने इस प्रश्न का उत्तर आप अपने मन को स्वयं ही दे दें और मुझे धर्म-संकट में न डालें।"

कुछ क्षण रुक सधे स्वर में जयंती ने प्रश्न किया, "आपका असली नाम क्या है ?" उत्तर की प्रतीक्षा करते हुए उसका चेहरा कानों तक लाल हो गया और दिल बुरी तरह धड़कने लगा।

राजेन्द्र ने उसी गम्भीर भाव से उत्तर दिया, "मेरा नाम सुशील है।"

जयंती को लगा, उसका हृदय जैसे बाहर आ जाएगा।

कांपते स्वर में उसने दूसरा प्रश्न किया, "और वह कौन था जो देहरादून के प्लेटफार्म पर गुलाब के फूल हाथ में लिए खड़ा था··· वह बूढ़ा आदमी ?"

इतनी देर बाद राजेन्द्र यानी सुशील के चेहरे पर एक स्वाभाविक मुस्कराहट आई। वह बोला, "वे तो मेरे एकाउंटेंट थे।··· पिताजी की मृत्यु के बाद वही मेरे गार्जियन रहे हैं। उन्होंने ही मुझे पढ़ाया-लिखाया है। मेरे जो कुछ भी है वही हैं।"

जयंती के चेहरे पर भी मुस्कराहट आई, जो उसने राजेन्द्र की दृष्टि बचा रोक ली और अपने पलंग की ओर बढ़ वहां बैठ गई।

राजेन्द्र कुछ क्षण उसी तरह खड़ा जैसे अपने आगे का कार्यक्रम

ाश्चित करता रहा; तब आगे बढ़ जयंती के पास आया और बहुत स्नेह जयंती का हाथ अपने हाथ में लेकर बोला, "अब भी नाराज़ हो ?"
जयंती ने बहुत अभिमान के साथ राजेन्द्र की ओर देखा और सके वक्ष में मुंह छिपाती हुई बनावटी क्रोध के साथ बोली, "तुमने झे इतना बड़ा धोखा क्यों दिया ?"
"दूसरा कोई चारा ही नहीं था।" राजेन्द्र ने बहुत स्वाभाविक र में कहा। फिर कुछ रुककर सोचता हुआ बोला, "बात यह है जयंती क हमारी ज़िन्दगी इस कदर सीधी, सरल और सपाट है कि उसमें ड़ी से बड़ी घटनाएं घट जाती हैं और हमारे मन में कोई थ्रिल, ोई पुलक तक नहीं होती...इसी पुलक की तलाश में मुझे यह सारा पंच रचना पड़ा...खुद भी परेशान हुआ और तुम्हें भी व्यर्थ ही तना परेशान किया। लेकिन जयंती, मैंने यह सारा झमेला सिर्फ सी विश्वास पर किया था कि इतनी झंझटें और परेशानियां उठाने बाद हम लोगों का विवाह सचमुच ही एक स्मरणीय घटना बन ाएगा...वर्षों बाद तक हम लोग अपने विवाह की डिटेल्स को याद र एक नया ही थ्रिल महसूस करते रहेंगे...पता नहीं, तुम मुझसे हमत हो या नहीं।"
जयंती ने धीमे और स्नेह-सिंचित स्वर में कहा, "वैसे शायद न ोती; मगर तुम्हारी यह बात सुन सहमत हो गई हूं।"
"शुक्रिया!" राजेन्द्र ने मुस्कराकर कहा, "अच्छा, मैंने तुम्हें जो ष्ट पहुंचाया है उसके लिए तुम मुझसे नाराज़ तो नहीं हो ?"
राजेन्द्र के वक्ष में मुंह गड़ाए ही जयंती ने सिर हिलाकर तलाया, "नहीं।"
राजेन्द्र ने रिलीफ की एक लम्बी सांस लेते हुए कहा, "शुक्र है ुदा का। इसका मतलब यह हुआ कि अब मुझे निचली बर्थ पर नहीं सोना होगा।"
जयंती के सारे शरीर पर जैसे बहुत सारी च्यूंटियां एकसाथ ेंग गईं। प्रकट वह चुप रही।
राजेन्द्र बहुत प्यार के साथ जयंती के सुगंधित बालों पर हाथ फेरता रहा। तब अचानक चौंककर बोला, "हां, मेरी अटैची में से तुम्हारी

गला खखारकर खासे संकोच के साथ जयंती ने प्रश्न किया, "तुम्हें···तुम्हें पुष्पा कैसी लगती है ?"

राजेन्द्र मुस्कराया। बोला, "बस ठीक-ठीक लगती है···कोई खास नहीं। सच पूछो तो मुझे कुछ झल्ली-सी लगती है।"

"अच्छा मान लो, वह तुमसे शादी करने की इच्छा प्रकट करे तो···"

राजेन्द्र ने जयंती का हाथ पकड़ बनावटी घबराहट के साथ उसकी बात काटते हुए कहा, "मज़ाक न करो जयंती। पुष्पा से शादी! ···बाप रे! ···अगर ऐसी नौबत आई तो मैं शादी के दिन सुबह ही संन्यास ले हिमालय की कंदराओं में चला जाऊंगा—ऑफ कोर्स तुम्हारे साथ।···अकेले नहीं।···तुम्हारा साथ तो मैं अब इस जीवन में कभी नहीं छोड़ सकूंगा।"

जयंती के सारे शरीर में एक मादक सिहरन दौड़ गई। उस सुख की अनुभूति से अभिभूत हो वह राजेन्द्र के बहुत ही निकट आ गई और आंखें मूंदे इस तरह मुस्कराने लगी जैसे उसे स्वर्ग मिल गया हो।

राजेन्द्र बोला, "हां, और क्या पूछना है ?···जो भी पूछना है, इस समय पूछ लो।"

"और क्या पूछूंगी !" जयंती ने आंखें मूंदे ही नशीले स्वर में कहा, "तुमने मुझे तो निरुत्तर कर दिया।"

राजेन्द्र शरारत से मुस्कराया। तब बोला, "निरुत्तर करने की तो मेरी दूसरी टेकनीक है···तुम अभी उससे परिचित नहीं हो। यदि तुम सचमुच निरुत्तर होना चाहती हो तो केवल वही एक रास्ता है—नान्यः पंथा। दूसरा रास्ता नहीं है···और वह एकमात्र रास्ता है···" बोलते-बोलते वह रुक गया।

जयंती ने आंखें मूंदे ही बेड-स्विच की आवाज़ सुनी और महसूस किया कि कमरे के अन्दर अंधेरा फैल गया है···और जब राजेन्द्र ने अपनी सबल और सशक्त बांहों में उसे बंदिनी बना दायें हाथ से उसकी ठोड़ी ऊपर उठा उसके गुलाब-पंखड़ियों जैसे अधरों पर साधिकार अपने कांपते अधर रख दिए तो जयंती को लगा, सचमुच राजेन्द्र ने उसे हमेशा-हमेशा के लिए निरुत्तर कर दिया है।

०००

अब तक प्रकाशित हमारा कथा-साहित्य

उपन्यास

स्वयंवर	डाक्टर देव
आभा	एक सवाल
बीते दिन	कसक
बड़ी-बड़ी आंखें	नीना
बर्फ़ का दर्द	कुलटा
ग़द्दार	ज्वारभाटा
एक गधे की आत्मकथा	गीता
शेष प्रश्न	जाल
देवदास	भूल
विराज बहू	अधूरा सपना
पंडितजी	कलाकार का प्रेम
चरित्रहीन	एक स्वप्न, एक सत्य
आनन्द मठ	एक लड़की : दो रूप
आरती	छलना
क्रांतिकारी	प्रेम या वासना
मुक्ता	पाखंडी
संकल्प	रात और प्रभात
छोटी-सी बात	प्यार की ज़िन्दगी
दायरे	संघर्ष
अंधेरा उजाला	एक अनजान औरत का खत
प्यार की पुकार	प्रेमिका